मैत्रेयी पुष्पा और रीता चौधुरी के उपन्यासों में अभिव्यक्त नारी संवेदना

आज भी भारतवर्ष में पैदा होने वाली कन्या संतान का भविष्य अनिश्चयता की कगार पर खड़ा हैं...आखिरकार कब तक? कब तक यह सिलसिला जारी रहेगा । आज भी भारत के कई हिस्सों के निम्न मध्यवित्त परिवारों में कन्या संतान का जन्म होना बोझ माना जाता है । उनकी परवरिश इस तरह की जाती है कि 'एक दिन तुझे इस घर को छोड़कर जाना होगा' । अपना घर जब उनका अपना न बन सका तो पराए घर का भला क्या भरोसा ? खैर, फिरभी वह चुपचाप एक ऐसे घर ब्याही जाती है, जहाँ उसकी सुनने वाला कोई नहीं होता; बाबुल की घर की रानी पति के घर में वीरानी हो जाती है...। खैर, यह तो वह समस्या है; जिससे स्त्री सदियों से जूझ रही हैं । कठिन समस्याएँ तो वें सब हैं; जहाँ स्त्री को अधिकार दिलवाने के झूठे नाटक किये जाते हैं । उन्हें स्वतंत्रता का सपना दिखाकर उनके पंख काँट दिये जाते हैं । उसे पढ़ाया तो जाता है, पर नौकरी करने की छूट नहीं दी जाती हैं, नौकरी करने की छूट दे दी जाये तो उसकी कमाई पर उसका हक़ नहीं होता । कमाकर नहीं खिलाती तो माता-पिता के नाम पर ससुराल वाले गाली देते, कमाकर लाती तो ऐसे प्रतिक्रिया करते है; जैसे उसने बेटे की इज्जत कम हो जाती है !! बड़ी अजीब बात है कि किसी भी तरह वह दूसरों को संतुष्ट नहीं का पाती हैं । राजनीति में नारी का न होना उसकी कमजोरी मानी जाती है और होना उसका छल !! आखिर समाज चाहता क्या है ? न जाने कितनी सदियों से स्त्री इस खोखले समाज के सामने अग्निपरीक्षा देती आ रही है; और न जाने कितनी परीक्षायेँ अभी शेष हैं...इसका उत्तर वह आज भी ढूंढ रही हैं । पहले वह समाज से न्याय की उम्मीद रखती थी, परंतु अब उसे पूरा विश्वास हो गया है कि अपना भाग्य उसे खुद ही लिखना होगा । डॉ प्रदीप श्रीधर की शब्दों में, "आज समाज में महिलाएँ जैसी परिस्थितियों से जूझ रही हैं उनसे उन्हें खुद बाहर निकलना होगा और अपना रास्ता तलाशना होगा।"[1] मैत्रेयी पुष्पा और रीता चौधुरी ने भी अपने अपने उपन्यासों में नारी की संवेदना को समझते हुए हर दिशा ने उन्हें आगे बढ़ाने का प्रयास किया हैं ।

4.1. सामाजिक पक्ष :

मैत्रेयी पुष्पा और रीता चौधुरी- इन दोनों कथाकारों के उपन्यासों में नारी के सामाजिक जीवन पर आलोकपात किया गया हैं, जहाँ कई तरहों के खोखलापन सामने आता हैं । नारी के जीवन को लेकर समाज के लोगों द्वारा बँधाए गए कई ऐसे नियमों से पाठक परिचित हुए हैं, जो अत्यंत मार्मिक एवं अमानवीय रहे हैं ।

4.1.1. मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों के आधार पर :

मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में प्रत्येक स्त्री को सामाजिक संघर्ष से गुजरना पड़ा हैं । *अल्मा कबूतरी* की 'अल्मा' से लेकर *चाक* की 'सारंग', *इदन्नमम* की 'मंदा' तथा *विजन* की 'नेहा' तक हर किसी को समाज के उलझनों को सहना पड़ा । समाज के परंपरागत रूढ़िओं को तोड़ने के लिए उन्हें संघर्ष करना पड़ा । यहाँ तक की अपनी पहचान बनाने की ख़ातिर जान की बाजी तक लगानी पड़ी ।

अल्मा कबूतरी:

अल्मा कबूतरा जाति की लड़की है, पर उसका बाप पढ़ा-लिखा था । पढ़ा-लिखा होने के बाबजूद भी समाज में उसका मान न था । कबूतरा जाति एक मुजरिम जाति मानी जाती है । जिनका पेट चोरी से पलता है, जन्म से ही चोर समझे जानेवाली व्यक्ति भला कितना ही शिक्षित क्यों न हो; उसे सम्मान करनेवाले हमारे समाज में कम ही हैं । उनके समाज में नारी का कोई मान नहीं है और न ही कोई इज्जत; जो जिस तरह चाहे उनका इस्तेमाल करते थे । रामसिंह ने इसका विरोध किया था, वह अध्यापक था । परंतु एक दिन अपनी पत्नी और बेटी के ख़ातिर उसे भी उन अन्यायियों के आगे झुकना पड़ा । इस अत्याचार के मामलों में पुलिस अक्सर बढ़-चढ़ कर हिस्सा लेते थे । कबूतरों के बारें पता लगाने के लिए उनके ओरतों पर

अत्याचार करते थे । रामसिंह के पत्नी के साथ भी यह अन्याय हुआ, परंतु यहाँ कारण अलग थे । रामसिंह से पैसे वसूलने के लिए उसके बीबी को खुलेआम ज़लील किया गया था,

" डेरे पर चार सिपाही आए । बोले-अबके महीने क्या हुआ ?

-बच्ची बीमार थी । पत्नी गर्भ से है ।

-हरामी, हमारा हक मारने के लिए जोरू ग्याभन की थी ?

-हवालदार साहब !

-अरे ! जुबान लड़ाता है ? हमारी ताकत भूल गया ? इस औरत को अभी नंगी कर दें, बोल !" [2]

अतः रामसिंह पुलिस का शिकार बन जाता है, उसकी बेटी अल्मा उसके मित्र दुर्जनसिंह द्वारा नेता सुभानसिंह को बेची जाती है । वहाँ से जान की बाजी लगाकर भागती है तो डाकू श्रीराम उर्फ जनकल्याण मंत्री श्रीराम शास्त्री के यहाँ बंदी हो जाती है । अब तक की यात्रा में मानव रूपी सभी दानवों ने उसका शारीरिक शोषण किया, जिससे उसके गर्भ में पल रहे चार महीने की बच्चे की मृत्यु हो जाती है । एक रूपवती लड़की होने के अभिशाप स्वरूप उसे समाज के सभ्य लोगों ने नौंच डाला । अल्मा के साथ हुए हादसों ने उसे हमेशा उसके पिता की याद दिलाई है । रामसिंह कहता था , " ...हर प्रतिशोध के जरिए औरतों की ही दुर्गति करता है आदमी !" [3]

अल्मा ने फिरभी जिंदेगी से हार नहीं मानी, उसने मरने की नहीं जीने की कसम खा ली थी । ख़ुद को तथा अपने प्रेम को जीवित रखने के लिए अल्मा ने डाकू उर्फ नेता श्रीराम शास्त्री के सामने आत्मसमर्पण किया । शास्त्री के पास जाते समय अल्मा के मन में उदित विचारों को मैत्रेयी पुष्पा ने कुछ इस प्रकार उपन्यास में उतारा है , "अल्मा के आँखों में पुरानी तसवीरें प्रलय मचाये हुए हैं । उसका राजा-राणा । राजा की न हत्या करेगी न आत्म-हत्या ।" [4]

ज़िंदा रहने की इसी चाह से आदमी के भीतर हर मुसकिल को पार कर जाने वाला होसला उत्पन्न हो जाता है । परंतु अल्मा का बदला पूरा नहीं हो पाता है, वह श्रीराम को मारने की योजनाएँ बनाती किन्तु सफल नहीं हो पाती है । एक अधपढ़े कबूतरी को शिक्षा अपने मोह में बांध लेती है,

“जिससे घृणा थी, उसके कागजों से जुड़ाव होने लगा । कई-कई, कई-कई कोणों से पढ़ते और समझते हुए, डिक्शनरी की सहायता लेती । सही से सही शब्द खोजती ।”[5]

शिक्षा के महत्त्व को बहुत सुंदर ढंग से कथाकार ने यहाँ पेश किया है । शिक्षा हिंसा करना नहीं सिखाती है, क्योंकि यह लोगों में इंसानियत बाँटती है । उनमें प्रेम-भाईचारा जैसे अनुभवों को जागती है । कथाकार के शब्दों में, “ विचार बाढ़ की तरह आते । वह डूबने लगती । इसे कब मारूँ और कैसे मारूँ ? सोचने में सारी ताकत जाया हो रही है, बप्पा तुमने क्यों पढ़ाया-लिखाया ? पढ़ाई-लिखाई सोचने पर मजबूर करती है ।” [6] अर्थात शिक्षा लोगों को गलत राह पर जाने से रोकती है । परंतु आज शिक्षित लोग ही सबसे ज्यादा गलत काम करते हैं । कैसी बिड़म्वना है यह !! धीरे धीरे वह राजनीति के क्षेत्र में प्रवेश कर लेती है । अपने साहस के चलते वह राणा तक भी पहुँच जाती है । धैर्य, लगन, व बलिदान से अल्मा ने अपने आप को सजाया था । जिसके फलस्वरूप परंपरा को तोड़ने की हिम्मत व दिखा पायी थी । श्रीराम शास्त्री के दाह-संस्कार में अल्मा ने न केवल हिस्सा लिया बल्कि उसने मुखाग्नि किया । चूँकि श्रीराम अविवाहित थे, सो उनका कोई वारिस न था । अल्मा, जिनको उसने पत्नी (?) माना था, उसने ही यह काम सम्पूर्ण करने का निश्चय किया । यह जानते हुए भी कि यह लोगों को स्वीकार्य नहीं होगा, उसने अपना कर्तव्य पूरा किया । क्योंकि श्रीराम अपना सुख-दुख सब ही बाँटते थे, तो उस दृष्टि मुखाग्नि का हक़ निश्चित रूप ने अल्मा का ही होना चाहिए ।

“ जनसमूह स्तब्ध रह गया । लोगों ककई आँखें अंधी या नजर झूठी ? अल्मा ने आहिस्ता आहिस्ता अग्निमुख उठा लिया और अनवरत गूँजती मंत्रध्वनि के बीच श्रीराम शास्त्री की

'चंदन-चिता' को अग्नि समर्पित कर दी । पवित्र वैदिक क्रिया का ध्वंस ! पंडितों का स्वर-प्रवाह जहाँ का तहाँ जाम गया । वे अवाक विमूढ़ स्थिर आँखों एक-दूसरे को देखते हुए...कपालक्रिया के मंत्र भूल गए ।" [7]

इतना सब कुछ हो जाने के बाद भी जनसमूह अल्मा से एक भी सवाल न कर सकी, क्योंकि अल्मा ने सबके मन में अपने लिए एक अलग परिचय बना लिया था । जिसका इतिहास उसके और उसके पिता के बलिदानों का परिणाम है ।

चाक:

चाक की नायिका सारंग भी शिक्षा के कारण ही पूरे समाज से लड़ जाती है । इस कोशिश में श्री-धर उसका साथ देता है, जो गाँव के स्कूल में नए शिक्षक के रूप में नियुक्त है । समाज के लोग पहले से ही सारंग के पढ़े-लिखे होने का मज़ाक उड़ाती थे, इस संयोग ने मानो उनके बातों को पंख दे दिये । समाज की पुरानी मान्यताओं एवं रिवाजों के चलते मनुष्य प्रगति नहीं कर पाते हैं । जैसे जैसे पुरानी परंपरायें रूढ़ि में परिवर्तित होती जाती हैं, वह न तो केवल व्यक्ति के लिए बल्कि समाज के लिए भी हानिकारक सिद्ध होता हैं । विशेषकर महिलाओं में इसका प्रभाव ज्यादा पड़ता है । अभी भी देश के कई जगहों में शिक्षा से लेकर सामाजिक सिद्धांतों तक हर जगह में नारी का प्रवेश निषेध है । इन्हीं तथाकथित मान्यताओं को तोड़ने के कारण ही समाज ने सारंग पर सवाल उठाए थे । गाँव की एकमात्र शिक्षित स्त्री न समझकर गाँववाले उसे चरित्रहीन समझते थे । परंतु इन सब बातों से बेपरवाह सारंग अपना काम कर रही थी । इसी शिक्षा का मोह उसे श्रीधर के करीब ले जाता है । अपना बेटा चंदन तथा गाँव के अन्य बच्चों के भविष्य को सँवारने के ख़ातिर सारंग सदा श्रीधर के पास खड़ी रही । जाति-भेद प्रथा को न मानने वाली सारंग के लिए स्कूल का मास्टर श्रीधर कुम्हार का बेटा होते हुए भी किसी पंडित-ब्राह्मण से कम न था । सारंग ने कभी उसकी जाति नहीं देखी, उसने केवल श्रीधर के आदर्श और ज्ञान को देखा था । गाँववालों के लाख षड्यंत्र एवं धमकियों के बाद भी वह उस गाँव में डटा

रहा ताकि बच्चों को अच्छी शिक्षा मिल सके । इन्हीं सब कारणों के वजह से सारंग की नजरों में श्रीधर का स्थान हमेशा ऊँचा रहा । गाँव के आनेवाली पीढ़ी के लिए श्रीधर किसी मसीहा से कम न था । गाँव की माताओं के मन में बच्चों के शिक्षा के प्रति सचेतना लाने का श्रेय श्रीधर और सारंग को जाता हैं । इसीलिए सारंग ने हर वह मुमकिन प्रयास किया, जिससे श्रीधर को उस गाँव से वापस जाना न पड़े । अपनी इस कोशिश में सारंग सफल होती है और सम्पूर्ण गाँव में शिक्षा का सही प्रचार संभव हो जाता है । इस कोशिश के चलते सारंग को लोगों के लांछन सुनने पड़े, पर वह पीछे नहीं लौटी और अपने लक्ष्य की और आगे बढ़ती चली गई । जब व्यक्ति के मन में अपने किए के प्रति पापबोध न रहता है, तब वह किसी भी काम के लिए अपने आप को दोषी नहीं पाता है । सारंग को पता था कि वह क्या कर रही है और क्यों ? इसीलिए श्रीधर और उसके बीच बने संबंध को वह गलत नहीं मानती थी । सारंग कहती है,

“मुझे तो पाप नहीं लगता अपना किया । कतई नहीं हुआ पाप-बोध । जो किया, सोच-समझकर किया । मैं अबोध थी, न विधवा राँड और न कुंआरी अल्हड़ जवानी की मारी ।”[8]

उपन्यास में इन सब के साथ ही समाज के कुछ ऐसे परंपरा का भी चित्रण हुआ है, जिससे उस समाज में नारी की स्थिति के बारें में पता चलता हैं । पुरुष कैसे वहाँ अपने फ़ायदे के लिए नारी को माध्यम बनाता है और उसकी भावनाओं से खिलवाड़ करता है । प्रस्तुत उपन्यास में ‘रेशम’ के माध्यम से इस नियम को पाठकों के सामने लाया गया है । रेशम सारंग की बुआ की बेटी बहन ही नहीं बल्कि वह उसकी दोस्त भी थी । रेशम के पति के मृत्यु के बाद उनके बड़े भाई ने रेशम को शादी का प्रस्ताव दिया । असल में यह एक ढोंग था । उसे अपने भाई का हिस्से की संपत्ति हड़पनी थी, परंतु जब उसे यह पता चलता है कि रेशम गर्भवती है, तो वह तुरंत अपने फैसले से मुकर जाता है । उसके ससुराल वाले मिलकर उसकी हत्या कर देते है । रेशम अपने साहसी व्यक्तितत्व के कारण ही हिंसा की बलि हो जाती है, क्योंकि उसने अपने जेठ के सेज में

जाने से इन्कार कर दिया था और अपने मन के हिसाब से साथी का चयन किया था । ऐसे और कई किस्से अतरपुर गाँव में मौजूद हैं, जिससे स्त्री के दुखों का उजागर होता है । यथा

“मसीहा है थानसिंह मास्टर । घर से लेकर बाहर तक मसीहा… लोग कहतें हैं, अपने बड़े भाई के लिए कमसिन लड़की खरीदी थी-चालीस हजार में, भाई मर गया तो उस विधवा को अपनी सेज पर शरण दे दी । उसकी खेती जोड़ रहा है ।”[9]

सारंग इस तरह के खोखले नियम व बंधनों के खिलाफ़ आवाज़ उठाती है तथा उसने सभी प्रकार के अन्याय का प्रतिवाद किया । उपन्यास में एक औरत है-जिसका नाम ‘लौंगसिरी बीबी’ रखा गया था । उसके बातों से विधवाओं के वेदनाओं का स्वर मुखर हो उठता है । पति के मृत्यु के बाद पत्नी का जीवन जीते जी समाप्त हो जाता है, परंतु वही दूसरी ओर पत्नी के मृत्यु के पति दूसरा-तीसरा ब्याह रचा सकता है । यथा-

“ यह बात रेशम के मन में भी आई होगी, तभी तो उसने धर्म बिगाड़ लिया । गुरुकुलवाली मेरी साथिनों ने भी त्याग दिया था देह-धर्म का विधान, उन पर भी सजा के कोड़े बरसे । लौंगसिरी बीबी की अम्मा ने भी नहीं माना, बीबी ने कील दी उनकी जवानी । आज रोती हैं बीबी । कहती हैं-‘ऐसी बातें और मत बता री सारंग । मैं अपनी महतारी को ताँसना देती रही । ...पर मैं खुद भी अपना ताप मारती रही हूँ । पूरी उमर पीहर में बिता दी । मुझे क्या मर्द की चाहना नहीं होती थी ? आज समझी कि मेरी अम्मा मौका मिलते ही आदमी का भेस धरकर क्यों जाती थी बद्री चाचा से मिलने ? वह जानती थी कि मर्दों को ऐसे कसूरों को माफी मिल जाती है...”[10]

गाँव के नारिओं पर होने वाले हर अन्याय के विरुद्ध सारंग आवाज़ उठाती है। बच्चों की शिक्षा के लिए लड़ती है । उसके इस दुस्साहस को किसी ने समर्थन किया तो बाकी लोग उसे उलाहना देने लगे । रंजीत के पिता यानि सारंग के ससुर ने हमेशा अपनी बहू को समझा था । जब वह प्रधानी-पद का पर्चा भरकर गाँव लौटी थी, तब वे कहते है,

“भला बेटी कैसी हिम्मत से काम लेगी! आज तू रंजीत का रूप हो गई मेरे लिए, उससे जो उम्मेदे लगाई थीं, सपने देखे थे, तू पूरे कर रही है आग पर चलकर। बेटा! जो आग में तपना सीख लेता है, वह कुंदन हो जाता है।” [11]

इदन्नमम:

इदन्नमम उपन्यास की नायिका ‘मंदा’ अपना सम्पूर्ण जीवन समाज के हित के लिए उत्सर्गित कर देती हैं। जिसने अपने पिता के अधूरे स्वप्न को पूरा करने के लिए अपने बारें में सोचना ही छोड़ दिया था। पिता द्वारा देखा गया अस्पताल का सपना अब उसका बन चुका था, जिसे पूरा करने के लिए उसने अपना सर्वस्व उड़ेल दिया था। अपने प्यार मकरंद से बिछड़ ने के बाद अस्पताल ही मंदा के जीवन का एकमात्र लक्ष बन चुका था। मंदा को अपने माँ के होते हुए भी अकेले ही बड़ा होना पड़ा था। माता-पिता दोनों के ममता से वंचित लड़की अपनी दादी के साथ बड़ी होती है। सामाजिक नियमों का फंदा यहाँ भी चारों तरफ लहराता हुआ नज़र आता है। मंदा के पिता के मृत्यु के बाद उसकी माँ प्रेमा ने दूसरी शादी कर ली थी, जिस बात से उसकी दादी बेहद नाराज़ थी। प्रेमा ने अपनी पति के मृत्यु के साथ अपना जीवन समाप्त नहीं माना था, उसने अपना जीवन जीया। बऊ चाहती थी कि वह भी उसकी तरह ताऊम्र विधवा बनकर घर बैठी रहे। समाज के नियम भी कैसे होते है न, जो स्त्री को स्त्री के विरुद्ध खड़ा कर देती हैं !! अगर बऊ ने अपने जीवन में यह सजा नहीं झेली होती, तो जरूर वह प्रेमा की मानसिकता को समझने में समर्थ हो पाती। भला यह कहाँ का न्याय है; स्त्री के मृत्यु के बाद पुरुष स्वतंत्र होकर घूम सकता है, जो मर्जी कर सकता हैं और वहीं दूसरी ओर पुरुष के मृत्यु के बाद स्त्री को हमेशा के लिए चारदीवारी में बंध कर दिया जाता है। उसे अपनी स्वाभाविक इच्छाओं का गला घोंटने पर मज़बूर कर दिया जाता है। प्रेमा ने यह बंधन स्वीकार न किया और अपने जीवन में आगे बढ़ गई। परंतु इसका हरजाना भरना पड़ा मंदा को...माँ अपने बच्चे को जिस प्रकार सुरक्षा प्रदान कर सकती है, कोई दूसरा कभी नहीं कर सकता हैं। मंदा इसी के चलते नाबालिक अवस्था

में ही शारीरिक शोषण के शिकार बन जाती है । वह भी एक ऐसे व्यक्ति द्वारा, जो उसके मामा लगते थे । समाज ने मनुष्य को अनेक रिस्तें-नातों से परिचय तो करा दिया, परंतु मानव के रूप में छिपे राक्षसों से स्त्री को निजाद नहीं दिला पाये । उसके बाद आते विवाह की ओर...मंदा का मन मकरंद से जा मिला था, जो श्यामली के घर का ही एक बेटा था । परंतु सगाई के बाद भी मंदा से उसका रिस्ता केवल इसलिए तोड़ दिया गया क्योंकि मंदा के जायदात में सभी अपना हिस्सा मांगने लगे । मंदा के भविष्य को लेकर कोई चिंतित न था और न ही किसी को उसकी भावनाओं की खबर थी!! सब अपने धन प्राप्ति के गणित में व्यस्त हो गए थे । श्यामली के मुखिया पंचमसिंह के भाई गोविंदसिंह का स्वर था,

“दादा, तुम्हें उस मोड़ी से मकरंद का ब्याह कराना है तो ऐन खुसी से करो । पर इतेक समझे रहना कि जायदात तुम अकेले नहीं हड़प सकते । घर के अंडी-बच्चों तक का हिस्सा होगा । हम पागिल-सिर्री नहीं हैं, जो बैठ जाय हाथ-पाँव झार कें ।” [12]

पंचमसिंह भाई की बात सुनकर परेशान थे, क्योंकि वे भलमानस थे, परंतु मकरंद की माँ इन बातों से घबरागई थी, उसे अपने बेटे की जिंदेगी दाँव पर लगाने की कतई इच्छा न थी । सो उसने मकरंद को इस चंगुल से छुड़ाकर इलाहाबाद ले जाने में ही भलाई समझा। दरोगिन हाथ जोड़ते हुए बोलीं,

“सो कक्को, हम नहीं माँग रहे है कुछ । हम तो अपनी मकरंद की सलामती चाहते हैं ।” आगे वह कहती है, “हमारे बेटे की जान जोखिम में रहे, वह कैसा ब्याह ?”[13]

एक माँ अपने बेटे की सलामती की दुआ कर रही हैं, पर एक बेटी; जो माँ की ममता से कोसों दूर हैं, उसके बारें तनिक भी नहीं सोच पा रही हैं । कैसी अजीब बिडम्बना है मानव जीवन की... एक बार फिर से सामाजिक खोखलेपन की शिकार बन गई मंदाकिनी । श्यामली में मंदा की भेंट कुसुमा भावी से होती है, जिसे उस घर के एक बेटे के लिए ब्याहाकर लाया गया था पर बाद में वह दूसरा ब्याह कर लेता हैं, क्योंकि पहलीवाली से संतान उत्पन्न नहीं हो रहा था, जबकि खोंट

दूल्हे में था । जब उसे यह बात मालूम पड़ जाती है तो उसे बड़ी ठेंस पहुँचती हैं । एक के होते हुए दूसरी बीबी को लाना किसी भी स्त्री के लिए सहनीय न होगा...कुसुमा ने प्रतिवाद किया पर उसकी बातों को सुननेवाला कोई न था । अतः उसने भी उसी घर में बीमार पड़े रहनेवाले एक व्यक्ति के साथ मनमर्जी से शारीरिक संबंध स्थापित कर लिया । कथाकार ने यहाँ स्त्री के उस रूप को दिखाया है जो अपना अस्तित्व बरकरार रखने के लिए अत्यंत संघर्ष करती है । कुसुमा के ऐसा करने से उसके संतान को घर के संपत्ति में हिस्सा भी मिल जाएगा और कोई उसे वहाँ से निकाल भी नहीं पाएगा ।

श्यामली से लौटने के बाद मंदा लड़ाई होती समाज के उस श्रेणी के साथ, जो बाहुबल तथा पैसों से समाज के साधारण वर्ग को दबाकर रखता हैं । मंदा अब उन लोगों से लड़ रही थी, जो अपने स्वार्थ के लिए कुछ भी कर सकते थे । जिन लोगों उसकी पिता की हत्या की थी, वे ही अब मंदा के भी दुश्मन बन चुके थे । क्योंकि मंदा का एकमात्र लक्ष अब अस्पताल एवं गाँव की उन्नति थी । वह हर हाल में अस्पताल में एक डॉक्टर लाना चाहती थी । और आखिरकार मंदा के गाँव में डॉक्टर आता है, उसके पिता का अधूरे स्वप्ना जैसे सच हो गया । परंतु सरकारी अफसरों व नेताओं के दया के चलते वे भी ज्यादा दिन वहाँ नहीं रुके । डॉ इंद्रनील गाँववालों के लिए किसी भगवान से कम न था ।

"रात-बिरात नहीं सोचते डॉक्टर । अंधेरे-उजेरे का खयाल नहीं करते । आनगाँव से कोई बुलाने आए तो कम्पोटरजी के संग तुरंत अपनी बकसिया लिवाकर चल देंगे । भरी नींद में किसी किसान को जगा दो, किसी मजूर को झकझोरो, तो एक-दो दिन उठ जाएगा । तीसरे दिन भी जाग सकता है । वह भी रोज-रोज अपनी नींद में खलल नहीं डालने देगा । मगर रोज रोज नींद में खलल डालते देते हैं डॉक्टर । सोते नहीं हैं डॉक्टर !" [14]

गरीब के घरों की बहू-बेटी के साथ अभिलाख जब मनमाने ढंग से शेरखानी करता, तब मंदा दुर्गा का रूप धरकर सामने आती है । मंदा के ही साहस से प्रेरित होकर उसके परोस की लड़की

'सुगना' ने अपने साथ हुए अन्याय का प्रतिवाद किया । सुगना गर्भ से थी, अभिलाख ने उसके लिए अपने बेटे का रिस्ता लाया था पर उसने सुगना का बलात्कार किया था । सुगना इस दर्द को नहीं झेल पायी, ऊपर से समाज का डर भी था । अभिलाख जैसे पापी के प्रति उसके मन में रहे घृणा के भाव ने उसे काली का रूप धारण करने पर मजबूर कर दिया । शायद वह उसका अंत करके समाज की दूसरी निःसहाय लड़कियों को बचाना चाहती थी । परंतु अपने आप के प्रति भी उसके मन घृणा उत्पन्न हो गई थी, सो अपने को भी उसने जला डाला । अभिलाख के चापलूसी करनेवाले पुलिसवाले उसकी मृत्यु की घटना से बौखला जाते हैं । वे सुगना की माँ को बंदी बना लेते है और मंदा को फसाने के जाल बिछा देते है । दीवान अपने साथी के मौत से घबरा गया था,

"...बुलाओ हरामजा...मन्दाकिनी को । मजदूर भड़काए, दंगा करवाया । अब क़तल करा दिया । गदर मचा रखा है । उसका नेतापन निकालने आ रहे हैं दारोगाजी । मजा चखा देंगे । जब दफा 302 में..."[15]

मंदा के पास इतनी सुविधा थी कि वह भाग सकती थी या फिर छिप सकती थी । परंतु उसने ऐसा न किया और खुद पुलिस थाने में चली गई । एक लड़की जो पूरे गाँव में हो रहे अन्याय के लिए, वहाँ के शोषितों के लड़ती रही, सारा सभ्य समाज उसीके पीछे हाथ धोकर पड़ा है । वे न तो खुद न्याय दिला सकते हैं और न ही दूसरों को न्याय दिलाने देंगे । उन्हें मतलब है तो उनके स्वार्थ व धन से...मैत्रेयी पुष्पा ने ऐसे लोगों का नकाव उतारा है और उनपर करारा व्यंग भी किया है । उनकी नायिका सहज-सरल है पर कमजोर नहीं, और न ही डरपोक । समाज के इन अग्निपरीक्षाओं में वह खड़ी उतरती हैं और आगे बढ़ती चली आती हैं ।

विजन:

विजन उपन्यास में मैत्रेयी पुष्पा ने देहात को छोड़कर शहर को लिया । उपन्यास की दोनों नायिकायें 'नेहा' और 'आभा' होनहार डॉक्टर हैं । नेत्र-चिकित्सा के क्षेत्र में उनका अच्छा दखल है । प्रस्तुत उपन्यास में देहाती परिवेश को न दिखाकर शहरी परिवेश को दिखाया है ।

शहर जो अपने आप को बहुत आधुनिक समझता है, उस आधुनिक समाज के खोखलेपन को दिखाया गया है । जहाँ लड़की को पढ़ाया जाता है, आजादी भी दी जाती हैं, परंतु अपने जिंदेगी के फैसले लेना का उसे कोई अधिकार न रहता है । उनके जीवन की दिशा माता-पिता तय करते हैं; यह गलत नहीं हैं । परंतु फैसले में लड़की के मत के स्थान पर समाज की पाबंदियों को देखा जाता हैं, जो की गलत है । शहर की निम्न-मध्य परिवार की लड़की 'नेहा' डॉक्टरी पढ़ तो लेती है लेकिन उसे निभा नहीं पाती । क्योंकि उसका विवाह बिना उसके राजी के एक अमीर एवं प्रख्यात नेत्र-चिकित्सक के सुयोग्य(?) बेटे से करा दी जाती है । नेहा आगे एम.डी. (MD) की पढ़ाई पूरी करना चाहती थी पर उसके माता-पिता ने उसकी इच्छा से ज्यादा समाज के लोगों के बारें में सोचा; जो आए दिन दूसरों के घर की बातें कुरेदने में लगे रहते हैं । उन्हें भय है कि कही उनकी बिटिया ताउम्र घर में बैठी न रह जाये, लोगों के हजार तानें बिटिया की इच्छा पर भारी पर रहा था । और सबसे बड़ी और एहम बात-

"शादी बिना दहेज के हो रही है"; ऐसी सुविधा को भला कौन समझदार बाप ठुकरा सकता है ? "भरी थाली में लाट मारने वाले शेखचिल्ली होते हैं । ऐसे मौके कितनों को मिलते हैं ? लड़की मालकिन होने जा रही है और माथा कूट रही है !"[16]

नेहा का जीवन शादी के बाद मानो स्वाहा हो गया । अपनी विद्या सदुपयोग करना तो दूर की बात, वह उसे उपयोग में भी न ला सकी । उसने शादी के समय यह चर्त रखी थी कि शादी के बाद एम.डी की पढ़ाई पूरी करेंगी । उस समय चर्त वकायदा मान लिया गया था; परंतु समय आने उस पर अमल नहीं किया गया । सदियों से नारी के साथ होने वाले विश्वासघात ने यहाँ भी अपना रंग दिखा गया । ससुराल से तो अनुमति मिलने से रही, सो उसने अपनी माँ से मन की इच्छा जाहिर कर दी; एक माँ ही है, जो बच्चों को समझने का प्रयत्न करती है । लेकिन नेहा के आशा के विपरीत एक आदर्श तथा परंपरागत स्त्री व माँ का स्वर गूंज उठा,

"नेहा, पर तेरे ससुर...उसके बाद तेरे पापा..डर लगता है बेटा, मुझे बड़ा डर लगता है..."[17]

पुरुषों का डर किसी न किसी रूप में हर स्त्री को दूसरे किसी जरूरतमंद की सहायता करने से रोकती हैं । नेहा जब अपनी शादी को लेकर दुखी होती है, माँ उसे समझाती है कि शादी-ब्याह में औरतों की चलती नहीं है ? ये तो सब मर्दों के फैसले हैं । हाँ लड़का काना बूचा, बेरोजगार या एबीला न हो, यही माँ देखना चाहती है सो अजय में किसी तरह की कमी नहीं थी । उधर अपने ससुराल में विद्या को आजमाने के लिए आई-सेंटर तो था, परंतु वहाँ उसका अधिकार न था । आगरे के मशहूर 'शरण आई-सेंटर' में नेहा के लिए केवल स्वागत कक्ष का काम ही बाकी रह गया था । नेहा ने अपनी विद्या द्वारा एक मरीज को तुरंत ठीक कर एक दिन में वापस कर दिया था और यही उसकी सजा बन गई । दो-तीन दिन के मरीज को एक ही दिन में वापस घर भेज देना अर्थात घर आयी लक्ष्मी को ठुकराना, हजार रुपए का नुकसान ! 'नेहा अब से स्वागत कक्ष में ही बैठेगी' – डॉ पी.आर.शरण की बात सुनकर नेहा हैरान रह गई थी । मरीजों को ठीक करना एक डॉक्टर का सबसे पहला फर्ज़ होता हैं, और यहाँ उन्हीं को लूटने का षड़यंत्र रचा जाता है । ससुर उसकी काविलियत से डरते थे या फिर वाकई में उन्हें पैसों के नुकसान का दुख था, नेहा इसका राज़ कभी नहीं जान पायी । डॉ.पी.आर.शरण प्रख्यात थे, परंतु वे आप-टू-डेट नहीं थे, नवीन उद्भावनाओं एवं तकनीकों के ज्ञान का अभाव था । दूसरी तरफ नेहा एक होनहार और नई पीढ़ी की डॉक्टर थी । जो इन सब दिशाओं में माहिर थी, लेकिन वह लड़की है न ! एक लड़की भला कैसे उनसे ऊपर जा सकती थी ? रहा बेटे डॉ अजय का सवाल...उस विचारे ने तो किसी तरह बाप के पैसों से किसी तरह डिग्री हासिल की थी । खैर...हुआ वहीं, जो नहीं होना था...नेहा अपना आत्मविश्वास खो बैठती है । उसके काबिल ससुर और पति के कारण उनके सेंटर में एक बुजुर्ग मरीज की जान चली जाती है । दोनों बाप-बेटे चुप्पी साध लेते है और मरीज की मौत की घोषणा करने की ज़िम्मेदारी नेहा पर लाद दी । नेहा जानती थी कि सहज मृत्यु न होकर हत्या है, और उसका पति ही इस हत्या के जिम्मेदार है । अजीब उलझन व अंतर्द्वंद में पड़कर डॉ नेहा अपना मानसिक संतुलन ही खो बैठती है । दूसरी तरफ एक और डॉक्टर थी, डॉ आभा द्विवेदी, काबिल व होनहार । अपनी आदर्श पर चलनेवाली एक साहसी नारी थी । हर अन्याय के बिरुद्ध

अकेली ही खड़ी होनेवाली शक्तिशाली डॉ आभा, परंतु अस्पताल के लोगों की दृष्टि में पागल डॉ आभा; जो हमेशा गलत कामों में टांग अढ़ाती हैं । एक बार अस्पताल में एक स्त्री का बलात्कार हो जाता है और एक जूनियर डॉक्टर इस हादसे के जिम्मेदार थे । स्त्री ने जब आभा से शिकायत की तब उसने 'सरोज' (शोषित स्त्री) को न्याय दिलाने का वादा किया । सारें सीनियर डॉक्टर उसके खिलाफ़ हो गए और उन लोगों ने ही मिलकर बलात्कारी का बचाव किया, क्योंकि उसका बाप बड़ा आदमी जो था । यहाँ तक कि सरोज के पति को घुस देकर अदालत में उसका बयान तक बदलवा दिया जाता है । वहाँ के डॉक्टरों और लोगों ने मिलकर इस घटना का काफ़ी मज़ाक उड़ाया, डॉ चोपड़ा कहते,

"डॉ आभा इज मैड । शी इज सिनिकल । आभा पागल है, सनकी है । फ्रस्टेटिड वुमेन (कुंठित औरत) । साली ने पति क्या छोड़ा, पुरुषों की दुश्मन हो गई । आई फैमिनिज्म की नानी!" [18]

आभा केस हारने के वजह से दुखी न थी, उसे दुख इस बात पर था कि सरोज ने उसपर भरोसा नहीं किया । अपने घुसखोर पति-परमेश्वर के लिए अपना अपमान भूल गई और उसे समाज में फिर से लौट गयी; जहां वह एक 'वस्तु' मात्र समझी जाती है । आभा दुखी होकर कहती है,

"औरतों से हारी हूँ मैं । सरोज ने तंगड़ी मारकर मुझे गिराया है । यह भी नहीं देखा कि उसका बास्टर्ड हसबेंड घूँस खा गया । बयान बदलने के लिए मारा पीटा होगा, मैं मानती हूँ, मगर मारपीट अपने ऊपर होते बलात्कार जैसे अपमान से ज्यादा कष्टदायी नहीं था । मेरा साथ छोड़ दिया उस औरत ने...यह तो देख लेती कि एक औरत उसके साथ खड़ी है । बहनापे की ताकत भी कुछ कम नहीं होती । उसे पति की ताकत से औरत की ताकत हर हाल में कमतर लगी... । उसका भी क्या कसूर, उसे दुनिया को इसी तरह देखने की आदत है । यह बलात्कार डॉ अनुज ने किया, तो पीछे हटने का गुनाह सरोज ने किया ।" [19] डॉ आभा की शादी सफल सिद्ध नहीं हो पायी थी क्योंकि पति से प्राप्त लांछनों ने उसका विश्वास तोड़ दिया था, उसके अहं और प्रेम को ठेस पहुँची थी । उसका पति एक अच्छे खानदान का लड़का था । पढ़ाई-लिखाई में भी हमेशा

अवल आया करता । आभा माँ-बाप की एकमात्र कन्या संतान थी । पढ़े-लिखे होने के कारण उनलोगों ने शादी के लिए कभी उसपर दबाब नहीं डाले । फिर भी हर माँ-बाप की तरह एक अच्छा लड़का-अच्छे घर-परिवार की अपेक्षा वें भी करते । अंत में आभा के सम्मति से एक अवल और होनहार डॉक्टर, 'डॉ मुकुल' जो बरेली का था, आभा के वर के रूप में चुना गया । शादी के बाद अपने कर्मस्थल दूर कुछ दिन वे ससुराल में रही; शुरू-शुरू सब ठीक था, पर बाद में जब भी वह काम की बात करने लगती, ससुराल वालें ताना मारते । यहाँ भी धोखा था, शादी से पहले बात हुई थी कि चूँकि दोनों डॉक्टर है, तो विवाह के बाद बरेली में रहना न होगा, परंतु समय बीतते बीतते बातें बदल गयी, जब भी आभा अपनी काम की बात करती सभी उसे बरेली में रोक लेते । फिर एक दिन आभा अपने अस्पताल चली आती है, निसंदेह ससुराल वालों को उसका यू चले आना पसंद न था, सो आभा को कौसना स्वाभाविक था । कथाकार ने आभा की स्थिति को उजागर करते हुए कहा है कि,

"सास-ससुर की अवहेलना और ससुराल का विधान तोड़कर जानेवाली आखिर वह औरत ही तो है । यह पाँच हाथ का जवान लड़का बुद्धू सा देख रहा है! पढ़-लिखकर नामर्द हो गया ? –इस गड़बड़ में गृहस्थी का 'कल' कैसे होगा ? आभा चली आयी । पीछे जो हुआ सुना-मुकुल के पापा बेटे को तरस की निगाह से देखने लगे । रुपए पैसे का सुख, इस अपमान के लिए ?माँ की आँखों में गुस्से की आग लहक रही थी-देव पितरों को अंगूठा दिखाकर गयी है । चूल्हे में जाये एसी डाक्टरी । सब कुनबे पर देवताओं का कोप पड़ेगा । असगुन खाली नहीं जाते ।"[20]

डॉ आभा ने मरीजों के अपनी ज़िम्मेदारी निभाने की कोशिश की थी, जो एक डॉक्टर होने का नाते उसका प्रथम कर्तव्य है, जिसे डॉ मुकुल भी निभाने का प्रयास करते हैं । घरवाले मुकुल की ज़िम्मेदारी तो समझ जाते है परंतु जब आभा की बारी आती है तो सब के सब नासमझ बन जाते हैं । स्त्री-पुरुष में फर्क कर बैठे; बहू का डॉक्टर होना जैसे गुनाह हो गया था । ऐसे सामाजिक बंधन जो अक्सर स्त्री-पुरुष में विभेद उत्पन्न कर देते है, वहीं नारी के उन्नति में मुख्य बाधक है

। उनकी शादी की असफलता के पीछे मुकुल के परिवार भी बहुत योगदान रहा । मुकुल ने भी अपने संस्कारों का परिचय देने में कोई कसर बाकी नहीं छोड़ा,

" मुकुल थे कि रह-रहकर आभा पर आक्रमण करते । योग्य डॉक्टर और प्रतिभाशाली नवयुवक में से बरेली का संस्कार पाया हुआ नौजवान निकाल पड़ा, जिसे अपने पक्ष में निश्चित ही यह सिखाया गया था कि औरतों को कैसे काबू में किया जाता है ? मुकुल अपने कुल की राज्यलक्ष्मी का नाम ले-लेकर साली, हरामजादी और हरामखोर जैसी गालियाँ उच्चारने में तनिक भी नहीं झिझके । मुट्ठियाँ अब भी बंधी थीं ।" [21]

इस अपमान-समारोह को डॉ आभा कभी नहीं भूल पायी, और न ही मुकुल को क्षमा कर पायी । पढ़े-लिखे शिष्ट एवं सभ्य पुरुषों का ऐसे बर्ताव के किसे दोषी ठहराए...समाज ही इन सब का जड़ है । जिसने जन्म से ही पुरुषों को यह समझाया है कि औरतें तेरी जूती के नीचे रहेगी, वह तो मानव है नहीं, केवल एक वस्तु है । समाज के इस नजर को बदलना होगा, तभी जाकर स्त्री कभी इन शोषणों से मुक्त हो पाएगी ।

4.1.2. रीता चौधुरी के उपन्यासों के आधार पर :

रीता चौधुरी के उपन्यासों में भी अनेक सामाजिक समस्याओं के साथ साथ नारी पर होते आए जुल्मों एवं अन्यायों का खुलासा किया गया है । रीता जी के उपन्यासों की एक विशेषता यह है कि उनके उपन्यासों की पटभूमि अलग अलग होती है, कभी गाँव, तो कभी शहर, कभी वर्तमान तो कभी इतिहास...परंतु सभी क्षेत्र में अन्याय के प्रति उनकी बुलंद आवाज़ दर्ज हो चुकी हैं ।

देउलांखुई:

यह उपन्यास ऐतिहासिक पटभूमि पर लिखी गई है । प्राचीन आर्य समाज के नारियों की स्थिति यहाँ स्पष्ट होती हैं । आर्य और अनार्य दोनों समाज में नारी की स्थिति भिन्न हैं । आर्य

समाज में नारी की इच्छा या फिर मत का कोई स्थान नहीं है; परंतु इसके विपरीत यहाँ एक ऐसे अनार्य समाज का चित्रण हुआ है, जहाँ नारी को अपना मत रखने की पूरी स्वतंत्रता दी जाती है। कमतापुर के सम्राट तथा जितारी वंश के क्षमताशाली वीर प्रतापसिंह ने अपने अहं के चलते अपनी महारानी को निर्वासन दे दिया था। रानी का अपराध(?) बस यह था कि वह नदी में फिसलकर गिर जाती है और एक अनार्य राजा उनका उद्धार करता है। इतनी सी बात पर राजा रुष्ट हो जाते हैं और रानी को संदेह की दृष्टि से देखते हुए अपने जीवन से उसे निकाल देता हैं। एक विशाल राज्य की महारानी का क्या केवल इतना ही मान शेष रह गया था ! रानी चंद्रप्रभा यह सोचकर आश्चर्यचकित रह जाती है। जहाँ नारी का कोई मान न हो, वहाँ एक क्षण भी नहीं रुकना अपना आत्मसम्मान गँवाने के बराबर ही प्रतीत होगा, रानी ने यही सोचकर निर्वासन स्वीकार कर लिया था। सदियों से चलती आई हुई प्रथा का यहाँ भी निर्वाह हुआ- एक पुरुष के अहं के चलते एक स्त्री को अपना सबकुछ खोना पड़ा। लेकिन कहावत है न ! जो होता हैं, अच्छे के लिए होता है। 'गोभा' साम्राज्य में आने के बाद चंद्रप्रभा को यह एहसास हुआ कि नारी का आत्मसम्मान क्या होता है !

"इस समाज में आकर ही मैंने यह जाना कि नारी के भी अपने अधिकार एवं मर्यादा होते हैं। यहाँ पर आकार देखा- यहाँ कोई प्रतापचन्द्र नहीं रह सकता- इस समाज में बिना दोष के कोई किसी पर उँगली भी नहीं कर सकता है। यहाँ फ़रेव नहीं है। अविश्वास नहीं है। यहाँ नारी का भी समान स्थान है, उनकी इच्छाओं का भी मान हैं।"[22]

अक्सर समाज में नारी का स्थान उसी प्रकार निर्धारित होता है, जिस प्रकार उस समाज के पुरुष चाहते है। कथाकार ने यहाँ दोनों प्रकार के समाज का चित्रण किया हैं। एक जहाँ नारी को दूसरों के मतानुसार चलना पड़ता हैं, और वह नारी को भी समाज में पुरुष के समान सम्मान व अधिकार प्रदान किया गया है। गोभा राज्य के मित्र राज्य 'खला' का शासनकार्य एक रानी निभाती हैं। रानी गंगावती कुशल राजनीतिविद एवं प्रिय रानी थी। रानी गंगावती एक स्त्री

होकर भी स्त्री के स्वाभाविक अनुभूतिओं से वंचित रही, क्योंकि वह एक राज्य की सम्राज्ञी है । उस नाते उसकी व्यक्तिगत अनुभूति की अपेक्षा सामाजिक उत्तरदायित्व ज्यादा मायने रखता है । अपने कर्तव्य के पालन हेतु उसने अपने प्रेम का ही परित्याग कर दिया था, और आजीवन उस प्रेम से वंचित रहकर सन्यासिनी की तरह जीवन-व्यतीत किया ।

ऐइ समय सेइ समय:

प्रस्तुत उपन्यास में कथाकार ने असम की राजनैतिक बिन्दुओं पर मूलतः चर्चा की है, परंतु जैसा कि यह सर्वविदित है कि समाज में ही राजनीति पनपता है, इसीलिए वहाँ पाठकों को तत्कालीन समाज की परिस्थितियों का भी आभास प्राप्त होता है । कथाकार ने उपन्यास में बड़े ही सुंदर ढंग से मध्यवर्गीय एवं उच्चवर्गीय समाज में नारी के स्थिति का वर्णन किया है । साथ ही यहाँ एक विवाहित स्त्री के जीवन-संघर्ष को दिखाया है । जो पति के साथ न रहकर स्वतंत्र रूप से स्वयं को समाज में प्रतिष्ठित करना चाहती है । कथा की नायिका ‘अदिति’ का पति चंदन तत्कालीन समाज के उच्च राजनीतिक पद पर आसीन है । केवल ‘चंदन’ की पत्नी होना उसे मंजूर न था । आदर्शों के समन्वय के अभाव से उसने अपनी पति से दूर रहने का फैसला लिया, क्योंकि नायिका को खोखले रिस्तों पर विश्वास न था । रीता चौधुरी की रचनाओं की एक खास विशेषता यह रही थी कि उनकी नायिकाएँ दबाब में आकर अपने व्यक्तित्व का गला नहीं घोंटती है, बल्कि बंधनों व दबाब से मुक्त होकर अपना इतिहास लिखती हैं । अदिति ने अपने दोनों बेटियों को अपने जीवन के आदर्शों के अनुरूप ही बनाया था । अदिति की दो बेटियाँ हैं-काजरी और कस्तुरी । उपन्यास में अदिति एक आदर्श स्त्री के साथ आदर्श माँ भी है, परंतु दोनों में से एक भी जन्मदात्री अदिति नहीं थी । परंतु कभी उनको यह एहसास नहीं हुआ था कि, अदिति उनकी सगी माँ नहीं है । असल में अपनापन ममता से आता है, सगा-पराया से नहीं... अदिति ने इसी ममता के आँचल से अपने दोनों बेटियों को बड़ा किया था । काजरी उसके विद्रोही मित्र की बेटी थी, जिसे वह अपने माहोल में पालने असमर्थ था और इसीलिए उसका दायित्व अदिति को

सौंपा । दूसरी तरफ कस्तुरी एक अनाथ शिशु थी, जिसे सड़क के किनारे से उठाकर उसने अपने गोदी में पनाह दी थी । अदिति के चरित्र को लेकर समाज के लोग तरह तरह की बातें करते थे, परंतु उसने कभी भी उन बातों पर गौर नहीं किया और न ही उन लोगों से झगड़ा किया । अदिति ने निरंतर अपने कर्मों के द्वारा अपने व्यक्तित्व का परिचय प्रदान किया । उसने अपने साहस और कर्मनिष्ठता से यह प्रमाणित कर दिया था कि एक माँ अपने बच्चों की परवरिश में कोई कमी नहीं रखती है । शुरू शुरू में उसके पति ने भी नहीं समझा था, परंतु कथा के अंत तक आते आते उसे भी अदिति के अद्वितीय महत्त्व का आभास हो चुका था । कथाकार ने 'सुकन्या' नामक एक साहसी एवं आधुनिक नारी पात्र का संयोजन किया है, जो नई पीढ़ी को प्रतिनिधित्व करने के साथ साथ आधुनिक मानसिकता को वहाँ करती है । उसके द्वारा रीता चौधुरी ने समाज के उन खोखले तथाकथित आधुनिक लोगों का पर्दाफाश किया है; जो समाज में अपने बड़े होने का ढिंडोरा पीटते रहते हैं । सुकन्या आधुनिक मान्यताओं को मानने वालों में से हैं, जो नारी और पुरुष को समान रूप में परखती है । वह समाज के खोखले परंपरा एवं रूढ़िओं से डरती नहीं है, और न ही अन्याय के आगे सिर झुकाती है । वह अपने हमउम्र के लड़कियों को आवारा लड़को से बचाती है और उन्हें मजा चखाती है । राजनीति के दाँव-पेच में स्त्री को बड़े आसानी से लोग हथियार बना लेते हैं । सुकन्या अपने कॉलेज में बड़ी पपुलार थी, तो कॉलेज के चुनाव में उसकी जीत तो पक्की थी । इधर सुकन्या के आ जाने से कॉलेज के पुराने नेताओं का भांडा फूटने लगा था । ऐसे में उसके विरोधियों ने मिलकर उसे शारीरिक-धंधे जैसे भयानक अपराध में फंसा दिया था । इसके पीछे उनका दो उद्देश्य था- एक दो सुकन्या की बदनामी और दूसरा चुनाव में उसे हरवाना । सुकन्या के पिता एक बहुत बड़े आदमी थे, और काफी सारें राजनीतिक नेताओं के साथ उसका संबंध था, तो इस कारण वह इस षड्यंत्र से जल्दी निकल आती हैं, परंतु वापस आकार उन बदमाशों को ऐसा मजा चखाती ही कि उन्हें कॉलेज छोड़कर भागना पड़ता हैं । असल में असमी नाम की एक भोली लड़की को पहले उन गुंडों ने फँसाया था, सुकन्या जाकर उसे बचा लेती हैं अपने आप को पुलिस के हवाले कर देती हैं । जब व्यक्ति कोई गलत काम नहीं

करता है तो निडर होकर परिस्थिति का सामना करता है, यहाँ भी सुकन्या ने वैसा ही किया। एक आधुनिक समाज की पीड़ित नारियों के लिए आधुनिक उद्धारकर्ता के रूप में सुकन्या का चित्रण यहाँ किया गया है। सुकन्या का मानना यह है कि जब तक आप दबते रहोगे, पलटकर जबाब नहीं दोगे; तब तक लोग आपको दबाते रहेंगें और तानें मारते रहेंगें। अन्यायी को सजा दिलाने के चतुर और साहसी होना अपरिहार्य है। कस्तुरी और सुकन्या में गहरी दोस्ती थी, इसलिए अपने मन के दुखों को वह सुकन्या के सामने खुलकर रह सकती थी। हमारे सभ्य समाज में आज भी 'कन्या' के जन्म के बाद घर से दूर फेंक दिया जाता है। कस्तुरी अपनी मन की व्यथा सुकन्या के सामने रखती हैं, "काफी दिनों से तुझे यह बात कहने की कोशिश कर रही थी। मेरी माँ ने मुझे जन्म देकर सड़क किनारे फेंक दिया था, इस माँ ने मुझे आश्रय दिया है, जिस साहसी माँ की तुम बात कर रही हो; उसका खून मेरी रगों में नहीं दौड़ रहा है, मुझे एक कायर माँ ने जन्म दिया था।"[23]

पपीया तरार साधु:

प्रस्तुत उपन्यास की पटभूमि यद्यपि शहरी है, परंतु मूल पात्र देहात से ही है। जहाँ देहाती की परिवेश की एक लड़की का संघर्ष प्रस्फुटित हुआ है। गाँव की लड़की जेउति शहर आती है। आँखों में सपने, दिल में उम्मीदें...अच्छे पत्रकार बनने की इच्छा ने जेउति के मन से दुनिया भर के डर मानो निकल गया। किन्तु शहर के गंदगी से वह अब तक परिचित नहीं थी। गाँव के सहज-सरल एवं स्वच्छ माहोल में पली-बढ़ी होने वाली लड़की का शहर के आधुनिक लोगों के दोमुँहेपन से बेखबर होना अत्यंत स्वाभाविक था। समाज के सुविधावादी लोगों ने उनके भावनाओं का न केवल मज़ाक उड़ाया बल्कि उसकी प्रतिभा को भी कुचलकर रख दिया। एक तरफ जहाँ 'जेउति' जैसी पात्र सामाजिक शोषण व अन्याय का शिकार हो रही है, वही दूसरी ओर 'अपर्णा' जैसी सशक्त पात्र का भी चित्रण कथाकार ने किया है। जो अन्याय के खिलाफ़ लड़ती है और समाज के उन स्वार्थन्वेषी दानवों के चंगुल से अपने आप को बचाती। पहले पहल

अपर्णा ने भी सुबिमल फुकन के द्वारा ही पत्रकारिता के जगत में कदम रखा था, उसकी पूजा करती, हर बात को मानती और एक दिन उसने अर्पणा को शारीरिक संबंध बनाने का अश्लील प्रस्ताव दिया था। परंतु अपर्णा ने उसे ठुकरा दिया और कहा कि,

"कुछ मामलों में मैं अपने जीवन को लेकर परीक्षा नहीं करना चाहती हूँ।"

क्या तुम 'नियम' की तरह सहज नहीं हो अपर्णा ?

नहीं, मैं 'नियम' की भाँति सहज नहीं हूँ।

अच्छा...ऐसा है, तो फिर ठीक है-

अपर्णा को आश्चर्यचकित करके चला गया था वह और उसीके बाद से अपर्णा की असली लड़ाई शुरू हुई थी।"[24]

इस घटना के बाद शुरू शुरू में अपर्णा के लेखों का प्रकाशन बंध हो गया था और बहुत संघर्ष के बाद उसने अपना खोया हुआ सम्मान वापस पाया था। अक्सर कुछ पुरुषों का ऐसा मानना होता हैं कि उनके बिना स्त्री कभी आगे बढ़ ही नहीं सकती। अपर्णा द्वारा सुबिमल का प्रस्ताव ठुकराना उसे हजम नहीं हुआ, तो उसे बर्बाद करने लिए उसने अपनी पूरी ताकत लगा दी थी। परंतु अपर्णा का अपने बलबूते पर उसी क्षेत्र में डटे रहना उस पुरुषतंत्र के लिए एक करारा जबाब था। समाज के दोनों तरह के लोगों के माध्यम से कथाकार ने यहाँ 'चयन' का सवाल उठाया है। दोनों नारी पात्र एक ही परिवेश से आती है, परंतु एक ने सहज व रंगीन मार्ग को अपनाया और दूसरे ने कठिन एवं नीरस मार्ग को चुना और नतीजा सब के सामने था। नारी संवेदना के विराट पहलु को छूकर यहाँ कथाकार ने 'अपर्णा' के द्वारा जेउति को न्याय दिलाया है। उस पर हुए अन्याय व अपमानों हिसाब चुकाया हैं। नारी अपने सहज एवं विश्वसनीय प्रवृत्ति के कारण अक्सर ही समाज के दानवों द्वारा प्रतारित होती है-पुनः एकबार यही कड़वा सच पाठकों के सामने प्रस्तुत किया गया है। इनके अलावा 'सुबिमल फुकन' के माध्यम से कथाकार ने

पत्रकारिता जगत में नारी को भोग्य सामग्री समझे जाने वाले मानसिकता पर करारा व्यंग किया है । यहाँ 'मनोरमा' जैसे पात्रों के माध्यम से उसी परंपरागत ईर्षा का प्रतिफलन हुआ है । समाज के वे लोग जो अच्छाई का मुखौटा पहनते हैं और दूसरों के विश्वास का नाजायज़ फ़ायदा उठाते हैं, उन सभी पर उपन्यासकार ने व्यंग किया है । साथ ही 'जेउति', 'चंदना' जैसे पात्रों के माध्यम से नारी हृदय के दुख को उजागर किया है । कथाकार ने सम्पूर्ण उपन्यास में एक विशेष बिन्दु पर पाठकों का ध्यान आकर्षित किया है । अगर किसी स्त्री में अन्याय के खिलाफ़ सच्चाई के साथ लड़ने की ताकत है तो कोई न कोई हमराही उसे मिल ही जाता है और कोई भी दानव उसका शोषण भी नहीं कर पाता है । सदियों से शत्रु के संहार से ही नारी ने अपनी शक्ति का परिचय दिया है । कथा के अंत में पत्रकार सत्येन ने इस सारी घटनाओं को न्यूज़ पेपर में धारावाहिक रूप में प्रकाशित कर उन सारें लोगों के मुखोटें खोल दिये थे । अपर्णा ने सारें सबूत उसे दे दिये थे, जो जेउति ने अपने डायरी और चिट्ठिओं में लिखकर अपर्णा को दिया था ।

मायाबृत्त:

प्रस्तुत उपन्यास में सामाजिक विसंगतियों को दिखाने के साथ साथ समाज की रूढ़ियों में पीसती नारियों की वेदना पर भी प्रकाश डाला गया हैं । कोई अपने रंगत के कारण ज़लील हो रही है, तो किसी को लड़की होने की सजाए मौत के बराबर जिंदेगी नसीब हो रही है । काले-गोरे का भाव मनुष्य की जीवन की दिशाओं को बदलकर रख सकता है । इतिहास के पन्नों में अफ्रीका के निग्रो जनजाति के सामूहिक विप्लव ने इस बात का प्रमाण बहुत पहले ही दर्ज़ कर दी थी । मायाबृत्त उपन्यास की नायिका 'नीरा' को भी इस कालेपन के दहसत से गुजरना पड़ा था । नीरा उच्च वर्गीय परिवार की लड़की थी, परंतु वहाँ भी उसे इस काले-गोरे वाले वैमनष्य के भाव से निजाद नहीं मिला । उसका और एक नाम था 'पुति' । सुंदरता की परिभाषा कोई तन से देता है तो कोई मन से...नीरा के चारों ओर स्थित समाज उसे तन की बदसूरती(?)के लिए कोसती थी; उसके घरवाले तक उसे पसंद नहीं करते थे, उसकी बुआ उसे ताना मारती है,

“...ऐे- क्या नाम है तेरा ? हाँ याद आया- पुति । नहीं- तू पुति नहीं है- तू काली हैं । काली, बदसूरत...।”[25]

दूसरी वहीं नीरा का दोस्त ‘सुवर्ण’ उसकी मन की सुंदरता को निहारता था, उसे जीवन के सुंदरता से परिचित कराता था; जीवन में आगे बढ़ने के लिए प्रेरणा प्रदान करता हैं । नीरा और सुवर्ण के इस मित्रता को उसके परंपरागत एवं रक्षणशील समाज ने एक लड़के साथ हुई उसकी दोस्ती को भी अश्लील मान्यताएँ प्रदान कर दी थी । नीरा को समझने वाला एक मात्र व्यक्ति था ‘सुवर्ण’; जिसे वह अपनी मन की हर बात कह पाती थी । परंतु नियति के कारण दोनों को बिछड़ना पड़ा; मन से नहीं तन से दोनों अलग हुये थे । नीरा को समाज की कठिनाइयों ने, अपमानों ने जीना सिखाया, उसे जिद्दी बनाया और यही उसके विकास की प्रथम सीढ़ी थी । वह हर हाल में जीना चाहती थी; मनुष्य में यही जिजीविषा सबसे बड़ी चीज होती है । नीरा के इस यात्रा में ‘ब्रजेन’ ने उसका साथ निभाया था, उसने नीरा को फिर से जीने के लिए, अपने लिए खुश रहने के लिए सिखाया था । परंतु शादी के बाद उसमें निहित पितृसत्तात्मकता सिर चढ़ कर बोलने लगी थी । उसने नीरा को अपने कक्षपथ में जीने के लिए मजबूर कर दिया था । उसकी सत्ता जैसे कही खो गई थी, वह अपने लिए नहीं, ब्रजेन के लिए जी रही थी, क्योंकि उसका अपना तो कुछ था ही नहीं । उनका घर कहने में तो दोनों का था, पर वहाँ होता वही था; जो ब्रजेन चाहता था । बहुत दिनों के बाद जब सुवर्ण उसे मिलता है, तो ब्रजेन को उनकी दोस्ती खलती है, जबकि नीरा ने शादी से पहले ही उनके सबंध में उसे सब कुछ बता दिया था । उनका प्रेम शारीरिक न होकर मानसिक था, लेकिन नीरा का पति यह कभी नहीं समझ पाया । उसके लिए नीरा केवल उसकी संपति थी,

“रीति-रिवाजों को क्यों नहीं मानती हो ? क्यों ऐरे-गेरे का हाथ पकड़ती हो ? लोगों को मौका मिलता है, क्या तुम नहीं जानती ? लोग समझते है कि तुमने कुछ इशारा किया है । समाज ठीक नहीं है । लोग अच्छे नहीं है । पहले जो किया था, सो किया । अब तुम्हारी शादी हो चुकी है ।

तुम्हारी एक इज्जत है, मेरी भी है । तुम्हारी इन हरकतों के वजह से मार्केट में तुम्हारी कितनी बदनामी है, पता है तुम्हें ? कभी समझने की कोशिश की है ?”[26]

एक पुरुष स्त्री की स्वतंत्रता को दबाते हुए यह सवाल कर रहा है कि मेरे समाज में तुम्हारी जगह कितनी सुरक्षित है ? तुम्हें तो मेरे इशारों पर ही नाचना है । तुम मेरे अलावा किसी दूसरे पुरुष को छू नहीं सकती, उनसे बात नहीं कर सकती, चाहे वह तुम्हारा बचपन का दोस्त हो, या फिर तुम्हें समझनेवाला कोई तुम्हारा अपना हो....अपनी पत्नी से बेशुमार मोहब्बत करने वाला पति अपने भाई से डरता है । नीरा ने जब शिकायत की थी कि उनका देवर बेडरूम में घुस आता है तो ब्रजेन ने उसे दरवाजा बंध रखने की सलाह थी । अपने भाई को डाटना तो दूर उसको एकबार के लिए समझाना या पूछना भी उसने जरूरी नहीं समझा । नीरा को पता चल गया था कि ब्रजेन अपने घरवालों से डरता है, अग्नि के साथ फेरे लेकर जीवनसाथी तो बना लिया था उसने; किन्तु उन वचनों को निभाने की हिम्मत ब्रजेन में नहीं थी । नीरा को अपने अकेलेपन का बोझ फिर से ढोना पड़ा था । उसने अब तय कर लिया था कि अब की बार वह चुप नहीं बैठेगी । नीरा ने अपने माँ से इस बारें में बात की थी,

“ उन्हें इस बारें में पता है । मैंने कहा है । ब्रजेन ने कहा अशांति फैलाने से कोई फायदा नहीं । चुप रहने में ही भलाई है । घर की बात है । समाज में उनकी ही बदनामी होगी । ब्रजेन ने कहा की उसके आने से बेडरूम का दरवाजा बंध करके रखना । लेकिन मैंने भी कह दिया, मैं अन्याय नहीं करती हूँ और सहन भी नहीं करूँगी । एक सीमा तक उपेक्षा करती रहूँगी, पर उसके बाद मेरा कोई दोष नहीं ।”[27]

नीरा को दिल से चाहने वाले ब्रजेन के मुँह से यह वाणी !! खैर वे तो पराये है; लेकिन उसके अपनों ने क्या किया ? नीरा के इस समस्या के हल के रूप में उसकी आदर्श माँ ने कहा,

“ तू इन सब बातों को छोड़ पुति । लोग सुनेंगे तो तुझे ही हँसेंगे । तुझे पागल कहेंगे, नहीं तो मतलबी और नहीं तो पापी कहेंगे । नहीं तो तुझे ही गलत समझेंगे । सावधानी बरतना । औरतें

मुँह नहीं खोलती, इसीलिए तो यह समाज आज तक टिक रहा है; समझी । कहा क्या हो रहा है, इसके बारें में जिस दिन औरतें मुँह खोलकर बोल पायेगी; उसके बाद यह समाज पहले जैसा नहीं रहेगा । क्या हमने कुछ गलत नहीं देखा था ? क्या हमने नहीं भोगा ? सहन किया है, चुप रही हूँ । क्या कभी कोई हमारे घर की बदनामी कर पाया है ? ब्याह से पहले भी घर के भीतर कितने गलत आदमी देखे है, तू सोच भी नहीं सकती । हमने तुमलोगों को बचाकर रखा, इसीलिए उन गलत चीजों को नहीं देख पाये । सभी पुरुष गलत नहीं होते, किन्तु गलत होते है । खुद को बचाकर रखना ही बुद्धिमान का काम होता है । सहन करना सीख पुति ।" [28]

यह माँ के वचन थे या अन्याय सहने व पराधीन रहने का मूलमंत्र !!! अन्याय करना जितना बड़ा गुनाह है, अन्याय को सहना उससे भी ज्यादा गुनाह होता है । हमारे समाज में बेटियों को अन्याय को छुपाने व सहन करने की ऐसी शिक्षा भला क्यों दी जाती है ? स्त्री को साहसी बनाने के स्थान पर क्यों डरपोक बनाया जा रहा हैं ? ऐसे अनेक सवाल रीता चौधुरी ने पाठकों के सामने रखे हैं । क्या गलत देखते हुए समाज के भाय से अन्याय को होते देखते रहना चाहिए ? क्या निर्दोष होने के बाबजूद समाज के कठघरे में खड़ा होना जरूरी है ? अपने हक़ के लिए, न्याय के लिए आवाज़ उठाना क्या गलत है ? इन सवालों का उत्तर खोजती हुई नीरा एक दिन अपने आप प्रतिष्ठित करने में सफल हो पाती है । अपने अंतरात्मा की पुकार को पहचान पाना इतना आसान न था; सुवर्ण के इस कठिन कार्य को नीरा के लिए आसान बना दिया था । नीरा धीरे बंधनों से मुक्त होकर अपना परिचय पाने लगी थी । कथाकार ने यहाँ समाज में स्त्री के विरुद्ध हो रहे अन्यायों को कई रूपों में दिखाया हैं । खाप पंचायत के द्वारा किए जानेवाले अन्यायों का भी यहाँ पर चित्रण हुआ हैं । नंदिनी नामक चरित्र के द्वारा पंचायत के जुल्म को दिखाया गया है । खाप पंचायत के बारें में निकिता बताती है उनके अनुसार पंचायत के अंतर्गत आने वाले सभी गाँव के लड़के-लड़कियाँ भाई-बहन है, उनके बीच प्रेम नहीं हो सकता, शादी तो दूर की बात । उनके नियम न मानने वालों के लिए पंचायत ने बस एक ही सजा रखी है, 'मौत'...यहाँ सबसे ज्यादा खराब हालत होती है लड़कियों की,

“ हरियाणा के गाओं में लड़कियों हालत बहुत खराब है । हर समय उन्हें दबोचकर रखा जाता हैं । उन पर अत्याचार किया जाता हैं । अनेक माँ-बाप अपने बेटी को खेत में व्यवहृत पेष्टिसाइड पिल खिलाकर मार डालते है । पुलिस से छिपकर उसे जला देते है । अगर कही लड़का-लड़की भाग गए तो घरवालों को लाख रुपये का जुर्माना भरना पड़ता है । उस परिवार के बाकी लड़कियों और औरतों को अत्याचार सहना पड़ता है...”[29]

नंदिनी भी इसी पंचायत के अधीन थी, जिसका पति शादी के एक साल बाद मर जाता है और उसे मायके वापस भैज दिया जाता है । वह बचपन से एक लड़के से प्यार करती थी, घरवालों ने समाज के डर से उसकी शादी कही और करा दी थी । लड़के ने भी दिल पर पत्थर रख लिया था, परंतु जब एक साल बाद जब वह विधवा बन गई; तब उससे रहा नहीं गया । दोनों ने भागने की योजना बनाई थी, पर पकड़े गए और नंदिनी को घरवालों के साथ पच्याताप के चार-धाम की यात्रा में भैज दिया गया । उधर लड़के की हत्या कर दी गई... नंदिनी के दादाजी पंचायत के मुखियाँ थे, सो नंदिनी की जान बच गई । परंतु उस समाज में लौटकर वह करेगी क्या ?? जिस समाज ने उससे जीने की वजह छीन ली थी, वह वहाँ वापस नहीं जाना चाहती थी । नीरा और उसके साथियों ने मिलकर एक योजना बनायी । पहले घरवालों को नंदिनी और उसके बहन पद्मजा की झूठी आत्महत्या की चिट्ठी मिली और दूसरी ओर उनसे छिपाकर दोनों की शादी यात्रा मंडली के दो युवकों से करा दी थी । घुट-घुट कर मरने से अच्छा था कि वे नए सिरे से जीवन का आरंभ करे...

“निकिता और अमृता के साथ धीरे धीरे सेतु के उस पार चली गई नीरा । सेतु के उसपार के आश्रम में तब दूल्हा-दुल्हन बने बैठे थे रणवीर-नंदिनी, निहार-पद्मजा ।

नदी के दोनों तरफ खोजने के बाद नंदिनी के दोनों भाई तब थाने में रिपोर्ट दर्ज करा रहे थे।”[30]

केवल यही नहीं भारतीय समाज के और एक सत्य का उजागर यहाँ किया गया है । शादी के बाद जब किसी घर में बच्चा पैदा नहीं होता है तो दोष लड़की पर आता है, कोई यह जानने की

कोशिश नहीं करता कि लड़का भी असमर्थ हो सकता है । प्रस्तुत कथा में अनुराधा नामक पात्र के द्वारा ऐसे तमाम स्त्री के दुखों का उजागर हुआ है । अनुराधा नीरा के गोमुख यात्रा में सहयोगी थी । उसका पति नपुंसक था । तीर्थयात्रियों के बीच में एक लड़का था बांटी, जो अनुराधा को पसंद था । चार-धाम के यात्रा के उपरांत अनुराधा ने बांटी से शारीरिक सुख मांगा तो उसने अनुराधा को गलत समझा और साफ मना कर दिया दिया । अनुराधा का दुख स्वर में परिवर्तित हो गया था,

"जाती हूँ । कोई सहन नहीं कर सकते । वे कर सकते हैं । नपुंसक कर सकते हैं। मेरे कोख में बच्चा जन्म होने से भी उन्हें कोई आपत्ति नहीं हैं । सिर्फ उनके साथ रहना होगा । बस समाज को उनके नामर्द होने की जानकारी नहीं मिलनी चाहिए । सभी मुझे चरित्रहीन समझकर घिण करते है । मुझ पर थूकते है । मैं किसी से नहीं डरती । मेरे लिए चरित्र नाम के शब्द का कोई अर्थ नहीं है । सतीत्व का भी कोई अर्थ नहीं है । मेरे चरित्र को सुधारने के लिए लोगों ने मिलकर मुझे तीर्थ-यात्रा पर भैजा हैं । शरीर जिसका अस्थिर हो, शरीर जिसका अतृत्प हो, तीर्थ उसे बदल नहीं सकता बांटी ।" [31]

4.2. राजनीतिक पक्ष:

राजनीति भी समाज का ही एक अंश है, यहाँ लोग सत्ता के चलते इतने अंधे हो जाते हैं कि अपने स्वार्थ के अलावा उन्हें और दूसरा कोई दिखाई ही नहीं देता है । इस क्षेत्र में भी नारी पर शोषण होता आया है, प्रारंभ में तो महिलाओं को वोट डालने का अधिकार भी नहीं मिला था । परंतु नेतागण इतने चालाक हो गए हैं कि महिलाओं के वोट प्राप्त करने के लिए उनके लिए नौं-नई योजनाएँ बनवाने का दावा करते हैं, स्त्री-सशक्तिकरण का ढिंडोरा पीटते है, जबकि वास्तविक छबि सबके सामने है । रीता चौधुरी और मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में इन सभी विषयों की दृष्टि से नारी पर हो रहे शोषण को दिखाया गया हैं ।

4.2.1. मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों के आधार पर:

अल्मा कबूतरी:

प्रस्तुत उपन्यास में कथाकार ने भारत की प्रादेशिक राजनीति का खुलासा किया है। एक प्रख्यात डाकू का मंत्री बन जाना ही यहाँ सबसे बड़ा व्यंग है। पाठक यहाँ राजनीति के गंदे मंसूबों में पिसती नारी की पीड़ा का अनुभव कर सकते हैं। बड़े बड़े नेताओं को खुश करने के लिए उनके प्रतिनिधि किस प्रकार मासूम लड़कियों के जिंदेगी का सौदा करते हैं, उनके भावनाओं को कुचलते हैं- इन सब का मार्मिक चित्रण प्रस्तुत उपन्यास में हुआ है। नेता वर्ग अपने मन को बहलाने के लिए लड़की का मनचाहा इस्तेमाल करते है, ऐसा लगता है मानो वह कोई जीवित प्राणी न होकर भोग की सामग्री मात्र है। अल्मा भी इसी परिस्थिति की शिकार बनी थी। अपने पिता के मृत्यु के बाद पिता के दोस्त दुर्जनसिंह से उसे प्रदेशीय नेता के टुकड़ो में पलनेवाले दलाल सुभानसिंह के हाथों बेच दिया। समाज में अक्सर रक्षक ही भक्षक का रूप धरण कर लेते है। नवयुवक धीराज की मदद से वह उस नरक से तो निकल जाती है, परंतु फिर से जाकर प्रदेशीय नेता श्री-राम शास्त्री के महल में कैद हो जाती है। हालातों से हारी अल्मा थक चुकी थी, इसीलिए उसने तय किया कि 'अब भागना नहीं, अब डटकर जीना होगा'; क्योंकि इसके अलाबा जिंदा रहने का तथा अपने प्रेमी राणा से दुबारा मिलने का कोई भी रास्ता भी तो नहीं बचा था ! अगर बचेगी नहीं, तब तो मिलन की गुंजाईस ही नहीं होती है। यहाँ भी उसका शोषण हुआ, परंतु वह खून के आसू पी गयी और सही मौके के तलाश में इंतेजार करती रही। डाकू श्री राम अनपढ़ था, अल्मा की पढ़ाई-लिखाई यहाँ काम कर गई; धीरे धीरे नेताजी के राजनीति क्षेत्र में 'कबूतरी अल्मा' का प्रवेश होने लगा। नेता के पर्चे पढ़ देती तो कभी किसी विषय पर अपनी राय दे देती। नेताजी उसे अपनी पत्नीवत व्यवहार करने लगा, उनके सारें सभाओं की सूची अब अल्मा तय करनी लगी थी। बात यहाँ तक पहुँच गई थी कि श्री राम शास्त्री ने संसद के सदस्यों को भी अल्मा से परिचित करवाया था। अल्मा कबूतरी को एक नया नाम मिला 'अल्मा शास्त्री'; लोग अब अल्मा को शास्त्री जी का गाइड व सहयोगी मानने लगे थे। शास्त्री के मृत्यु के बाद उसकी पार्टी ने भी अगले उम्मीदवार के रूप में अल्मा का नाम घोषित कर दिया था,

“अखबारों के मुखपृष्ठों पर जो तस्वीर छपी उसमें अल्मा मुख्यमंत्रीजी के पास खड़ी बातों में संलग्न है। राज्यपालजी नजदीक खड़े सुन रहे हैं ।

विशेष खबर यह थी -प्रदेश के समाज कल्याण मंत्री श्रीराम शास्त्री का अंतिम संस्कार ओरछा के कंचना घाट पर सम्पन्न हुआ ।

कल दूसरी खबर होगी-श्रीराम शास्त्री के निधन के कारण खाली हुई बबीना विधान सभा सीट के लिए सत्तारूढ़ पार्टी की ओर से श्रीराम शास्त्री की निकटतम सहयोगी और निष्ठावान गाइड अल्मा उम्मीदवार होगी ।”[32]

एक कबूतरे की बेटी का यह संघर्षमयी इतिहास किसी भी स्त्री के लिए प्रेरणा बन सकती है । स्त्री जब अपने साहस को पहचान पाती है, तो संसार की कोई भी शक्ति उसे आगे बढ़ने से रोक नहीं सकती है । चाहे वह समाज के बंधन हो, या फिर राजनीति के गंदे खेल...राजनीति के दाँव-पेच में स्त्री एक मुहरे की भाँति प्रयोग होती दिखाई पड़ती है, और बाद में वे लोग ही यह आरोप लगाते है कि स्त्री अपनी सुंदरता का प्रयोग कर राजनीति में आना चाहती है ! सत्ता में आना चाहती है ! कैसी गज़ब की है यह राजनीति !! इतिहास गवाह है हजारों सालों के स्त्री के बलिदानों का...। जिस पर चढ़कर कई सम्राटों ने अपना रोब जमाया, परंतु कभी उन जाबाज़ रानीओं को इतिहास के पन्नों में जगह नहीं मिली । वे बस लोककथाओं में बस गई...अल्मा कबूतरी में रानी पद्मिनी तथा रानी लक्ष्मीबाई के पराक्रम को याद किया गया है।

“भूरी कबूतरी की दादी की दादी कहती थी-रानी साहिबा के दरबार में हमारी अरज सुनी गई । वह रानी झाँसी के अंतरंग किस्से सुनाती थी । झलकारीबाई को अपनी गुइयाँ बताती थी । जब किले के नीचे रानी की अष्टधातु की मूर्ति लगाई गई तब भूरी का कहना था कि रानी किले की इस जगह से कूदी ही नहीं थी । वह तो जीन कसे घोड़े पर रस्सी-पालकी के सहारे उतारी गई थी । झलकारी ने रानी का बना पहना था और पद्मिनी के बेटे-बेटी सिपाहियों और सखियों के रूप में

किले के दीवारों पर डटे रहे । गोलियाँ चल रही थीं । उधर झलकारी कजजा साहब को भरमा रही थी । इधर इधर दीवारों पर डटे सिपाही, सखियाँ गोलियाँ खाकर आमों की तरह टपक रहे थे ।"[33]

इसी माध्यम से ऐतिहासिक राजनीति पर स्त्री के सफल योगदान पर भी प्रकाश डाला गया है और उनको श्रद्धांजलि प्रदान की गई है । कोई चाहे या न चाहे नारी को उनके इस सम्मान से कोई भी वंचित नहीं कर सकता है । हाँ ! सामाजिक सम्मान प्राप्त होना एक दूसरी बात है, परंतु वे आज भी लोगों के दिलों पर राज करती हैं ।

चाक:

चाक उपन्यास में भी प्रदेश की राजनीति को दर्शाया गया है, परंतु यहाँ विधानसभा आदि को न लेते हुए ग्राम के प्रधानी पद को केंद्र बनाया गया हैं । पर राजनीति तो राजनीति होती है, वह शहर अथवा गाँव नहीं देखती, वह तो बस अपना कहर बरसाती है । एक छोटे से गाँव में भी प्रधानी पद के चुनाव को लेकर साजिसें रची जाती है; हत्याएँ होती हैं । इसके चलते लोग एक दूसरे के खून के प्यासे हो जाते हैं । इसके घेरे में सम्पूर्ण गाँव का परिवेश नष्ट हो रहा था ; गाँव के प्रधानी पद के लिए सारंग का पति रंजीत अपना ईमान तक बेच चुका था । इतना पढ़ा-लिखा काबिल लड़का गाँव की राजनीति के चक्कर में पड़कर, अपना भविष्य बिगाड़ लिया था । गाँव की तरक्की के सपने देखनेवाली सारंग ने अपने पति के मन में बचे प्रधानी पद के लालस को खूब समझा था । लेकिन उसे दुख इस बात का था कि उसका पति शत्रु और मित्र में फर्क न कर सकता है; उसे यह भी पता था कि गाँव का प्रधान फत्तेसिंह रंजीत से बस काम निकलवा रहा है । अपने रहते वह कभी रंजीत को उम्मीदवार बनने न देगा । श्रीधर और भँवर के परामर्श से सारंग ने खुद प्रधानी पद के लिए अपना पर्चा भर दिया । रंजीत ने उसे ऑफिस में रोकने की कोशिश की थी, पर भँवर के रहते वह कुछ न कर सका । इधर सारंग नैनी को पर्चा भरते देख फत्तेसिंह हक्का बक्का रह गए, वे भी पर्चा भरने वाले थे; परंतु अब उसके विपक्ष खड़े होने की

हिम्मत नहीं जुटा पा रहे थे, सो फत्तेसिंह को पर्चा भरने के कह दिया । उसकी हिम्मत को देखकर गाँव के प्रधान साहब की हवा निकाल गई थी । कथाकार के शब्दों में,

"लोग मानें या न मानें, स्त्री आदमी से दोगुना खाती है, चार गुनी लज्जाशील, छः गुनी हिम्मती और आठ गुनी कामिन । तभी तो इसे गहनों से बाँध-छेदकर रखा जाता है । पर यह रंजीत की लुगाई आदमी से कितनी बलवान है कि बाँधने-छेदने पर भी इतनी खौफनाक !"[34]

सच में, स्त्री यदि कुछ करने की ठान लेती है, तो उसे रोकना बहुत कठिन हो जाता है और शायद इसीलिए इन सब मामलों में स्त्री को हमेशा दबाकर रखने का प्रयास किया जाता है । रंजीत ने सारंग को गद्दार समझा तो उधर फत्तेसिंह ने रंजीत को गद्दार समझा, आपसी रंजिसे बढ़ती गई...लोग बातें बनाने लगे, सारंग के प्रधानी पद के उम्मीदवारी को लेकर गाँव में तरह तरह की बातें फैलने लगी,

"रंजीत की बहू पर्चा भर आई है इगलास जाकर, खसम को तो हवा भी नहीं लगने दी ।"

"ज़ुलम! पल्लौ(प्रलय)! कलजुग की मार! ...अब ऐसा ही होगा, इससे भी ज्यादा बुरा ।"

कोई कह रहा है, "लुगाई राजनीति में आ रही हैं, बुरी बात क्या है इसमें ?"

"अरे तुम सीतापुर की सावित्री की मिसाल ले बैठते हो, विधवा औरत, नाथ न पगहा ।"

"और असावरवाली कृष्णाकुमारी तो विधवा नहीं है?"[35]

सारंग के राजनीति में कदम रखने से गाँव में एक नए परिवर्तन की उम्मीद जगी थी । सारंग को इस बात का आभास हो गया था कि सत्ता जिनके हाथों में होती है, बातें भी उन्हींकी चलती है । गाँव भर के स्त्री-व बच्चों के उज्ज्वल भविष्य के लिए गाँव में परिवर्तन लाना आवश्यक है; और यह परिवर्तन तभी संभव है, जब गाँव का प्रधान पैसों की चिंता छोड़ जनहित की चिंता करें । प्रधानी पद के चुनाव से पर्चा हटाने के लिए रंजीत ने सारंग को पैसों का लालस दिखाया, परंतु

वह डटी रही, क्योंकि उसके आँखों के सामने उन तमाम शोषितों स्त्रिओं की गाथा थी, जो सामाजिक रूढ़ियों के चलते सदियों से पिसती आई हैं । अगर वह इस उम्मीदवारी से अपना नाम वापिस लेती है उसके अपने घर के रिस्तें तो बस जाएँगे परंतु उन शोषितों की उम्मीद टूट जाएगी, जो वर्षों से ऐसे चमत्कार की तलाश में बैठे हैं । कथाकार ने इस परिस्थिति का सुंदर चित्रण प्रस्तुत किया है,

" मैं चाहकर भी पीछे नहीं लौट सकती । अपने प्रधान से छिपा पाओ तो यह बात बताती हूँ कि पन्नासिंह नाम वापिस लेंगे, भले फतेसिंह खुदकशी कर लें । तुम मुझसे बाहर नहीं, कहते कहते सारंग के मन में आत्मविश्वास जैसी लहर दौड़ने लगी ।" [36]

इदन्नमम:

प्रस्तुत उपन्यास में भी कथाकार ने राजनीतिक शक्ति के दुरपयोग को दिखाया है और साथ ही साथ नारी के संघर्ष को भी दिखाया है । मंदाकिनी समाज के अन्यायकारी लोगों से डरती नहीं थी, और न उनके नेताओं से, जो केवल चुनाव के वक्त जनता को भरमाने आ जाते थे । उन नेताओं से वह सख़्त नफ़रत करती थी और जनता को उनकी सच्चाई दिखाने की कोशिश करती थी । आजादी के इतने वर्षों के बाद भी सोनपुरा गाँव में बिजली नहीं, कोई अस्पताल नहीं बनी, मरीजों को इलाज के लिए बहुत दूर तक जाना पड़ता है । कभी कभी तो बीच रास्ते में ही उनकी मृत्यु हो जाती है । सरकार आए दिन उम्मीद दिखाती है और चुनाव के बाद सब वादे उड़न-छू हो जाते हैं । चुनाव से पूर्व जब नेताजी गाँव की परिक्रमा करने आते है, तब उनका सामना मन्दाकिनी से होता है । अपने पिता के अधूरे स्वप्न को पूरा करने के धुन में लगी मंदा अब तक पूरे गाँव की समस्याओं से जुड़ चुकी थी । वह नेताजी से कुछ इस तरह मुखातिब हुई,

"दरअसल आपको देखकर हम यही सोच रहे हैं कि इतने बड़े, महान आदमी हमारे गाँव में पधारे हैं, कुछ कहें कि न कहें पाहुनों से ? फिर आपसे कह भी दें तो हमारी समस्या आपको बड़ी छोटी लगेगी । लेकिन आपकी परियोजनाओं की तरह हमें तो बड़े लगते हैं अपने गाँव के छोटे-छोटे

काम ।" मन्दाकिनी ने अपने पत्ते खोल दिये थे, अपना कथन के परिणाम की चिंता किए बिना उसने गाँव की समस्या नेता के सामने रख दी,

"यह हमारा अस्पताल...कोई डॉक्टर नहीं यहाँ, दवाएँ नहीं, हारी-बीमारी के निदान की कोई सुविधा नहीं । इस अस्पताल से तबाह हुए हैं हम और इस अस्पताल की झूठी आशा-उम्मीद ने अब तक जिताया ।"[37]

-ऐसा साहस की दुस्साहस; जो भी हो मंदा ने नेताजी का मुखौटा उनके ही सामने उतार दिया था । अपने गाँव के दुखों के लिए वह कुछ भी करने को तैयार थी । नेता जी को गाँववालों की दुर्दशा समझाते हुए नेताजी जी का मुँह बंध करा देती हैं । मन्दाकिनी से बात करने से पहले नेताजी अपने दिनों के सुधार व उन्नयन का ध्वजा उड़ा रहे थे, "सरकार विकास लाती है, उन्हें विनाश लगता है । किसी का खेत, किसी का बाग, किसी की मेंड़, किसी का पेड़, किसी का ताल, किसी का घूरा, किसी का पोखर संकटों से घिरे हैं । हम क्या समझाएँ कि मूर्खों, इतनी छोटी-छोटी चीजों की परवाह की तो बड़ी-बड़ी प्रगति-योजनाएँ लागू कैसे होंगी ? परियोजनाओं का क्या होगा ? नई-नई तकनीकों को किस स्थान पर प्रयोग करेंगे ? देश आगे कैसे बढ़ेगा ?" [38] कैसी अजीब विडम्बना है !! गाँव के लोगों से उनकी जमीन व घर छीनकर उन्हें बेघर कर देश को प्रगतिहीन बनाया जा रहा हैं । उन्नयन के नाम पर लाये जाने वाले क्रेशरों से गाँवभर में जानलेवा बीमारियाँ फैलने लगी हैं । गाँव के प्रधान, मुखिया, बड़े-बुजुर्ग सारे मौन हैं; बस मंदा ही एकमात्र ऐसी निकली, जिसने बिना डरे नेताजी को उनके प्रगति की छबि दिखा दी,

"...और फिर उरई-झाँसी तक जाने के लिए दस बार सोचना पड़ता है रोज-रोज । इतना किराया-भाड़ा, ऊपर से दावा और डॉक्टर की फीस ! किसके पास धरा है गाँव में ! बड़ी दिक्कत है राजा साबजी, बड़ी परेशानी ! क्रेशरों के कारण गाँवों में धूल ही धूल छाई रहती है । पहले के मुकाबले दमा, साँस, तपेदिक कई गुना अधिक तक फेल गई हैं । मजदूरों के ही नहीं, किसानों के शरीर भी हो गए हैं इन बीमारियों के घर ।

क्रैशर क्या आया, शराब का ठेका संग ले आया । सो तबाह हो रही हैं गृहस्थियाँ ! उजाड़ रहे हैं बाल-बच्चे ! आदमी पी-पीकर बेसुध हुआ जा रहा है । आपकी पुलिस निहत्थों को ही करती है परेशान । बताइए, किससे कहें ?" [39]

एक साधारण लड़की होकर प्रदेश के विधायक के सामने उनके ही राजनीति का पोल खोल देना इतनी आसान बात तो नहीं है !! मंदा की बहादुरी आज की पीढ़ी के लिए मिसाल है । सच्चाई व बुलंद आवाज के साथ अपने प्रयोजनों व दुखों के बारें में कह पाना बहुत बड़ी बात होती है, यह हर किसी के बस की बात नहीं है ।

मन्दाकिनी को केवल सोनपुरा के लोग ही नहीं मानते थे, बल्कि सोनपुरा के आस-पास के गाँवों के लोग भी उसके मत का आदर करते, उसे समर्थन करते थे, क्योंकि वह सब के दुख को समझने का प्रयास करती थीं । नेताजी जब क्षेत्रीय दौरे पर आए थे तब उन्हें इस बात का इल्म हुआ था कि गाँवों की प्रगति न होने के कारण इसबार सोनपुरा के साथ साथ उसके नजदीकी गाँवों के लोगों ने चुनाव में वोट न डालने का फ़ैसला कर लिया हैं । जब बात की तह जाने का प्रयास किया; तब मालूम पड़ा कि असली फ़ैसला तो सोनपुरा गाँव में होता है, सोनपुरा पहुँचकर महाराज से बतियाया नेताजी ने,

"यहाँ का आदमी तो हाथ धरने नहीं दे रहा । खमा डिकौली, गौंती, नरसिंहगढ़, गोपालपुरा तमाम गाँवों का दौरा करके आ रहे हैं हम ।

गोपालपुरा में यह बताया कि अंतिम निर्णय होता है सोनपुरा में । वहाँ मन्दाकिनी से मिल लेना आप । असल बात पता लग जाएगी ।"[40]

विधायक जी के इस प्रश्न का समाधान था मंदा के पास; उसने कहा कि पैसे से जो अब तक आप लोग लोगों का ईमान खरीदते आ रहे हो, इस बार से यह नहीं चलेगा । आप लोग हर बार लोगों के विश्वास के साथ खिलवाड़ नहीं कर सकते हैं । अबकी बार जनता जाग चुकी हैं और

अपना फैसला वह ख़ुद लेगी । मन्दाकिनी की बातों ने नेताजी को चौका दिया; लड़की होकर ऐसी मजाल !! इतनी हिम्मत, प्रदेश की नेता के सामने जुबान लड़ाती है !! राजा साब समझ गए थे कि इसबार चुनाव अनिश्चयता के घेरे में है । फिर क्या मंदा की बातों का असर हुआ शायद; सोनपुरा गाँव के अस्पताल में देवता के रूप में डॉ इद्रनील पधारे । सोनपुरा के साथ आसपास के गाँव भी मानो धन्य हो गए । मंदा को अपना जीवन धरना सार्थक लगने लगा । परंतु यह रोशनी की वह किरण निकली, जिसने उजियारा फैलाकर घोर अंधकार को आमंत्रण दे दिया । डॉ इंद्रनील को कुछ ही दिनों में तबादला करा दिया गया; रह गए बच कंपाउंडर जी और बची-कूची दबाइयाँ ... मंदाकिनी का जीवन जैसे फिर सुना हो गया । और सच में इस बार सोनपुरा सहित आस-पास के गाँव के लोगो ने चुनाव वर्जन किया और वोटों का बहिस्कार कर दिया । सही-गलत का बोझ गाँववाले नहीं ढो पा रहें; अपने जीवन को लेकर वे चिंतित व भयभीत थे । इस बार नेता के खोखले आश्वासन उन्हें भरमाने में असफल रह गए और वोटों की पेटियाँ खाली ही वापस चली गई ।

“ज्यों ही सूरज नीचे को ढला, जीपें, इस गाँव से उस गाँव, उस गाँव से पल्ले गाँव, पल्ले गाँव से अतल्ले गाँव और गाँव-गाँव कार्यकर्ताओं ने एक-दूसरे को यह खबर पहुँचा दी कि जल्दी जाकर झाँसी, उरई, समरथ, मोठ जहाँ भी राजा साब मिलें, खबर करो कि पेटी खाली पड़ी हैं अब तक । सोनपुरा के आसपास का आदमी वोट नहीं दे रहा । अधिकारी लोग हाथ पर हाथ धरे बैठे हैं, मोहर पड़ी हैं, स्याही सुख रही है । कागज फड़फड़ा रहे हैं ।”[41]

गाँव की एक साधारण लड़की मंदाकिनी ने गाँव की जनता को इकठ्ठा किया, उनमें चेतना का संचार किया और सबसे बड़ी बात-उन्हें उनका हक दिलाने का प्रयत्न किया ।

विजन:

विजन उपन्यास में शहरी वातवरण को दिखाया गया है । राजनीति के स्थान पर यहाँ भारी रणनीति को दिखाया गया है । मेडिकेल कॉलेज की राजनीति के साथ साथ औरतों को

गलत और झूठा साबित करने की राजनीति को यहाँ दिखाया गया है । ऐसी उच्च शिक्षा के संस्थानों में अक्सर एक दल ऐसा होता है जो राजनीतिक लोगों के इशारों पर नाचते हैं , दाखिले से लेकर पदोन्नति तक उनका ही आशीर्वाद रहता है ! डॉ आलोक जैसे काबिल डॉक्टर को कॉलेज से छोड़ कर जाने पर मजबूर कर दिया था । डॉ आभा द्विवेदी; जिसने एक शोषित महिला को बचाने का प्रयास किया था, पूरा ऊपरी महोल गरम हो गया । सारे काबिल(?)सीनियर उससे खफ़ा हो गए,

“ डॉ. आभा अपने कमरे में कुर्सी पर बैठी बुदबुदाया करतीं-क्या लोग हैं यहाँ...डॉ. अनुज शर्मा के मस्त भविष्य को बचाकर अपने इस जूनियर को तबाह कर रहे हैं । यें मेडिकल कॉलिज में यह बात फैल गई थी कि अब किसी भी दिन किसी मामले में फँसाकर डॉ. आभा को सस्पेंड कर दिया जाएगा ।

सारी सुविधाएँ छीन ले गई । नजर टैस्ट से ज्यादा कुछ नहीं करेंगी । चालीस वर्ष से ज्यादा का मरीज डॉ. आभा के केबिन में जाना ही नहीं चाहिए, फोर्थ क्लास कर्मचारियों को ताकीद कर दी गई ।

बच्चों के कॉम्प्लीकेटेड केस डॉ. चोपड़ा लेंगे ।

स्टोर विभाग भी छीन लिया गया । अब उस पर डॉ. आभा का विश्वास कौन करें जो अपने ही विभाग के डॉक्टर के खिलाफ एफ़. आई. आर लिखाती है ।”[42]

प्रस्तुत उपन्यासों में कथाकार ने ऐसी ही राजनीति और रणनीतियों का पर्दाफास किया हैं और साधारण सी प्रतीत होनेवाली नायिकाओं की असाधारण भूमिकाओं को पाठकों के सामने रखा हैं ।

देउलांखुई:

ऐतिहासिक पटभूमि पर लिखी गई इस उपन्यास में प्राचीन राजनैतिक-क्षेत्र में नारी की सशक्त भूमिका को दिखाया गया है । उस समय की राजनीति में किस कदर नारियों ने अपना योगदान दिया था, साथ ही उनके त्याग का शब्दचित्र यहाँ अंकित हुआ हैं । राजा प्रतापचंद्र ने जब चंद्रप्रभा का त्याग किया था, तब वह अत्यधिक आवेश में थे । परंतु जब राजमाता के बातों से उन्हें सत्य का आभास हुआ कि रानी को उन्होंने बिना कारण ही त्यागा है; जबकि वह गर्भवती थी तो वे ग्लानि से पीढ़ित होने लगे । अपनी रानी को लौटकर लाना चाहते थे वे, परंतु राजमाता ने ऐसा नहीं होने दिया । अनुभवी राजमाता को अपने घर के लक्ष्मी को खोने का गम था और साथ ही साथ अपने राज्य को बचाने की उत्तरदायित्व भी था, क्योंकि उन्हें पता था कि राजा द्वारा की गई गलतियों के प्रभाव स्वरूप प्रजा के मन में राजा का मान कम हो जाएगा और राज्य के लिए कतई हितजनक नहीं होगा,

"असंभव । चंद्रप्रभा को ब्रह्मपुत्र में उत्सर्गित करने की वार्ता का को तूने ही प्रजा के बीच प्रचारित किया है । अब चंद्रप्रभा को लौटाकर लाने का कोई प्रश्न ही नहीं आता । इस भूल का कोई सुधार नहीं है । विसर्जित राजरानी को पुनः ग्रहण करना असंभव है..." [43]

अपने राज्य के हित के लिए राजमाता को यह फ़ैसला लेना पड़ा । राजा प्रतापचन्द्र के भूल के लिए सब को त्याग करना पड़ा । उल्लखनीय यह है कि राजमाता ने होनेवाले संभाव्य प्रजा-विद्रोह से राज्य को बचाया ।

चंद्रप्रभा को गोभा साम्राज्य में भेज दिया गया था । गोभा के राजा साधुकुमार ने उसे वहाँ यथोचित सम्मान-सहित रखा । यहाँ तक कि उसके बेटे को अपना नाम देकर अपने कुल में उठा लिया और उसे गोभा का युवराज घोषित कर दिया । आनेवाले दिनों में चंद्रप्रभा ने अपने आपको कनचारी के रूप में प्रतिष्ठित किया; जो गोभा की हर चर्चा में भाग लेती है और प्रजा को राह दिखाती है । यद्यपि वह गोभा की रानी नहीं थी, फिर भी वहाँ उसका स्थान रानी से भी ऊपर था । राजनीति के हर मसलों को वह राजा के साथ बैठकर सुलझाती थी । जब चंद्रप्रभा के पुत्र

मृगांक ने एक ही कुल की रानी गंगावाती के साथ विवाह में बंधने का निश्चय किया, तो चंद्रप्रभा चिंतित हो उठी । गोभा में एक ही कुल में विवाह असंभव है। ऐसा होने से पति-पत्नी दोनों को राज्य त्यागना पड़ता । चिंतित होना स्वाभाविक था । गंगावाती 'खला राज्य' की रानी थी और मृगांक गोभा का राजा; साधुकुमार ने आपत्ति नहीं दर्शाया था क्योंकि प्रकृतार्थ में तो मृगांक उनका बेटा नहीं था । लेकिन इसके विपरीत चंद्रप्रभा भीषण परेशान थी । जिस राज्य ने उसे और उसके आजन्मे बेटे को अपने गोद में स्थान दिया था, आज उसका बेटा उसी धरती को ही छोड़ देने के लिए तैयार है और वह भी केवल अपने स्वार्थ के लिए । उसने साधुकुमार के तर्क का प्रबल विरोध किया,

“यह उचित नहीं होगा गोभाराज । समाज के सामने आपने उसे अपने कुल में शामिल किया है, अपने पुत्र के रूप में उसे स्वीकार किया है । गोभा जैसे विशाल साम्राज्य का राजा बनाया है उसे । उसे राजा बनाने के लिए ही आपने विवाह भी नहीं किया । उसके मन को ठेस पहुँचेगी, बस यह सोचकर क्या अब वह सभी बातें भुलायी जा सकती है गोभाराज ? बीते हुए बातों के आधार पर नियम तोड़ने की प्रक्रिया को मैं अपराध मानती हूँ गोभाराज ।” [44]

खला राज्य की रानी गंगावती भी राजनीति में परिपक्क थी । अपने राज्य को सुरक्षित व प्रजा को सुखी रखने के लिए वह अहरह प्रयंत करती थी । अपने मित्र राज्य से सदभाव से तथा शत्रुयों के प्रति सावधानी बरतती थी । यद्यपि वह राजा मृगांक से प्रेम करती थी, परंतु उसके लिए उसका राज्य ही सर्वप्रथम था । अपने राज्य तथा प्रजा को उसने सदा ही प्रथम स्थान दिया है । मृगांक के साथ बिताए हुए एकांत पलों में इस विषय की चर्चा दोनों में होती थी,

“तुम शायद मुझे ही छोड़ दोगी-फिर भी अपना राज्य नहीं छोड़ोगी, कभी कभी मुझे तो ऐसा लगता है...

राज्य से प्रेम करना राजा का कर्तव्य होता है मृगांक । क्या तुम अपने राज्य से प्रेम नहीं करते ? राज्य के भविष्य के बारें में सोचकर ही तो तुम सात नदियों को पार कर जाने के लिए तैयार हो ? मेरे विषय में सोचकर क्या रुके हो तुम...” [45]

रानी गंगावती के देशप्रेम तथा विचक्षण राजनीतिक तर्क के सामने प्रतापी सम्राट मृगांक चुप हो गए थे । और रानी गंगावाती ने सच में मृगांक के साथ चले जाने से मना कर दिया था

“बहुत सोच कर देखा मृगांक-राज्य और समाज को छोड़कर तुम्हारे साथ चले जाना मेरे लिए लिए संभव नहीं है । क्षमा करना ।” [46]

परंतु अपने प्रेम को इतनी आसानी से भुला पाना भी संभव नहीं था, आजीवन गंगावाती ने विवाह नहीं किया जबकि मृगांक ने विवाह कर लिया था । मृगांक और उसके प्यार की निशानी गंगवाती के गर्भ में रह गया था, उसी के सहारे उसने जिंदेगी काँट दी । समाज के अनुमति से उसे ही अपना उत्तराधिकारी भी बनाया । अपने व्यक्तिगत सुख की अपेक्षा उसे समाज को महत्त्व दिया, चूंकि वहीं एक राजा का प्रथम धर्म होता हैं । अपने राज्य व प्रजा के हित के लिए उसने इतना बड़ा त्याग किया ।

केवल यही ही नहीं सदियों से नारी ने राजनीतिक क्षेत्र में अपनी योग्यता का प्रमाण दिया है । कभी माता के रूप में, तो कभी पत्नी व सहयोगी के रूप में । प्रस्तुत उपन्यास के राजमाता-चंद्रप्रभा तथा गंगावाती तीनों नारियों ने इतिहास के पन्नों में अपना नाम दर्ज कराया हैं । इनके तर्क एवं विचारों के चलते ही तीनों राज्य का भविष्य सुरक्षित रहा ।

पपीया तरार साधु:

राजनीति के पर्दे के पीछे छिपकर असत प्रवृत्ति के लोग किस प्रकार स्त्री का शोषण करते है । उसका बड़ा ही मार्मिक उदाहरण रीता चौधुरी ने इस उपन्यास के द्वारा प्रस्तुत किया है । कथाकार ने देश के चतुर्थ स्तंभ रूपी पत्रकारिता क्षेत्र की एक ऐसे रूप का उजागर किया है

जहाँ सफलता की सीढ़ी चढ़ने के लोग किसी भी हद तक जा सकते है । संवाद माध्यम और राजनीति का एक आपसी ताल मेल है, जिसके चलते कुछ लोग इस माध्यम की ध्वज्जियाँ उड़ा रहे हैं । कुछ राजनीतिक नेताओं को खुश करने के लिए उनकी सरस तथा विपक्ष की कटु आलोचना प्रस्तुत किए जाते है । कथा की नायिका अपर्णा और जेउति भी इसी चक्र में फँस जाती है । अपर्णा अपने जिद के कारण घरवालों की बात न मानकर संवाद-माध्यम से जुड़ जाती है, पत्रकार बनने का जुनून उसके सिर पर सवार था । परंतु व जिस स्रोत के सहारे आगे बढ़ रही थी; वह गलत था । एक मशहूर अख़बार के संपादक ने अपर्णा की खूब सहायता की, किन्तु बदले में जब उसने अपर्णा का शरीर मांगा, तब जाकर उसने अपना होश संभाला । उस संपादक के साथ रहते समय उसका आलेख हो या चाहे कविता; हर अख़बार व पत्रिका में छप जाती थी । लेकिन जैसे ही अपर्णा ने उसे अपनाने से इन्कार कर दिया, सारे रास्ते उसके लिए बंध कर दिये गए । अपना एक लेख छपवाने के लिए उसे मारा-मारा फिरना पड़ा । परंतु उसने हिम्मत नहीं हारी थी, राजनीति व पत्रकारिता जगत के लोग उसे इतनी नीच नजरों से देखते थे कि उसे अपने आप पर घृणा होने लगी थी । लेकिन अपने आत्मविश्वास के सहारे समय रहते ही उस संपादक से पीछा छुड़ा लिया था । अपर्णा के बाद जेउति आती है; अपर्णा उसके लिए गुरु समान थी । किन्तु जेउति में आत्मविश्वास का अभाव था, उसी अख़बार के संपादक ‘सुबिमल फुकन’ ने उसे भी गलत राह दिखाया और उसके भोलेपन का फायदा उठाया । जेउति बहुत कम समय में ही चर्चित हो उठी थी, क्योंकि उसने राज्य की एक इमानदार राजनीतिक नेता के बारें कटु समालोचना प्रस्तुत की थी, उनको गलत व घोसखोर सजाया था । यह सब फुकन और कुछ क्षमतालोभी नेताओं की चाल थी । जिसमें जेउति केवल एक मोहरे के रूप में व्यवहृत हो रही थी । असल में जनता के सामने ‘परमेश्वर राजखोवा’ नामक नेता की भावमूर्ति नष्ट करने की यह एक बहुत बड़ी साजिस थी । केवल यह ही नहीं विधानसभा की अंदरूनी बातें निकलवाने के लिए भी फुकन ने जेउति का गलत इस्तेमाल किया था । फुकन भी राजनीति की उचाइयों को चुके की ताक में था, इसीलिए तो मंत्रियों के आस-पास भँवरे की तरह उड़ता फिरता था । खैर, जेउति से

सारे गलत काम करवाने के बाद तथा उसके शरीर को भोग करने के बाद फुकन ने किसी फालतू चीज की तरह उसे फेंक दिया । जिससे अब कुछ भी हासिल नहीं करवाया जा सकता है, उसे साथ रखकर भला वह क्या करेगा ? दुनियादारी से हारी जेउति को धीरे धीरे सच्चाई का पता चलता है । जब राजनीति के लोगों के मुख से उसे यह मालूम होता है कि जो बातें लिखकर उसने राज्य में सनसनी पेदा कर दी थी, वह अचल में झूठ था, फरेव था, एक साजिस थी,

" ...हमारे बरदलोई साहब तो तुम्हारा नाम सुनकर तो रोमांटिक ही हो जाते है । पूछो क्यों ? *दैनिक बातोरी* अखबार में तुमने परमेश्वर राजखोवा के विरुद्ध जो धारावाहिक प्रतिवेदन जो लिखा था,-साला राजखोवा का तो पोजिसन ही खराब हो गया था । मैं तो हैरान हो गया था, इतने बड़े बड़े झूठ को आख़िर तुमने इतना सच बनाकर कैसे लिख लिया । मुझे तो कभी कभी संदेह हो गया था- क्या यही सच्चाई है! इस परमेश्वर ने सही में माल खाना शुरू तो नहीं कर दिया ।

सच ही तो लिखा था अहमेद भैया । उनके कॉरपसन का डॉकयुमेंट था तो ।

करपसन का डॉकयुमेंट? हाः हाः हाः तुम्हें भला किसने उल्लू बनाया ? फेक; फेक डॉकयुमेंट जेउति, मैंने ही बहुत मेहनत से बनाया था । हमारे फुकन साहब ने ही सिखाया,-कैसे क्या करना चाहिए । बरना मेरे मोटे दिमाग में कुछ भी नहीं घूसता था पहले ।"[47]

केवल इतना ही नहीं जेउति के शरीर को लेकर भी एक श्रेणी के लोग कामुक जन्तु की भाँति लड़ते थे । मनोरमा तथा राजनीति के दुष्ट प्रकृति के लोगों ने उसे ध्वंस करने की योजना बनाई थी और साथ ही परमेश्वर राजखोवा को भी बदनाम करने का षड्यंत्र रचा । मनोरमा के आदमियों ने जेउति का सामूहिक बलात्कार किया और सारा दोष राजखोवा के सिर पर लाड़ दिया । प्रमाण के रूप में षड्यंत्रकारियों ने परमेश्वर का गेस्ट हाउस का इस्तेमाल किया । जब राजखोवा अपने गेस्ट हाउस में पहुँचे, तब तक उसका बलात्कार हो चुका था, और अपराधी भी तब तक भाग चुके थे । 'तरुण असम' जैसे राजनीतिक अखबारों में यह खबर अत्यंत रोचक एवं सनसनी रूप में प्रस्तुत किया गया,

“ परमेश्वर राजखोवा ने युवा पत्रकार जेउति को नौकरी का लालस दिखाकर निर्जन एवं जंगली इलाके में स्थित गेस्ट हाउस में बुलाया और बड़ी ही निर्ममता से उसका बलात्कार किया ।” [48]

सच्चाई चाहे जो भी हो, लेकिन इसमें नुकसान हुआ जेउति का, उसने अपना आत्मविश्वास तो पहले ही खो दिया था साथ ही अब जीने की इच्छा भी उससे छीन ली गई । राजनीति के इस गंदे क्षेत्र ने जेउति जैसे तमाम लड़कियों का जीवन आज भी ध्वंस हो रहा है । विविध माध्यमों से उनके चीख को दबाया जा रहा हैं । एक दूसरे पात्र ‘सुरंजना’ के माध्यम से कथाकार ने राजनीतिक नेताओं व उनके दलालों की दुर्नीति का पर्दाफास किया है । लेट-नाइट-पार्टियों व समाज-सेवा के आर में वे लोग नारी-देह का व्यापार करते हैं । जो लड़कियाँ पत्रकार बनने का ख्याव लेकर शहर में आती हैं, उन्हें मीठी मीठी बातों में फंसाकर इस काम में लगाया जाता है । उनपर बड़े बड़े राजनीतिक नेताओं को खुश करने का जिम्मा होता हैं । यँ लोग पढ़े-लिखे शिक्षित युवाओं का भविष्य नष्ट कर रहे हैं । जेउति को अपने बारें में बताकर सचेत करना चाहती थी सुरंजना,

“... जिस सहायकारी और ममतामयी मिसेज बरुवा को तुमने देखा है, वह उनका असली रूप नहीं हैं । तुम्हें तो पता ही है कि उनका पति एक विजनेसमेन है । असल में पति तो बस नाम का विजनेसमेन है, उनके सारें काम तो यँ ही संभालती हैं । सभी पॉलिटिकल पार्टी के लोगों के साथ उनका संपर्क है । मंत्री, एम. एल. ए, पुलिस, पत्रकार से लेकर बड़े बड़े ऑफिसर सब इनके मुट्ठी में हैं । वह एक बहुत ही चालक औरत है । शायद कुछ भी ऐसा काम नहीं है, जो वह नहीं कर सकती है । बड़ी ही चतुरता से सुंदर किन्तु अभावग्रस्त अथवा महत्त्वकांक्षी लड़कियों को वह अपने वश में करती है । पहले तो पार्टियाँ या फिर दूसरे छोटे-मोटे कामों में उनका इस्तेमाल करती है । जैसे तुम । उसके बाद लड़कियाँ मेरी जैसी बन जाती है । वेश्या बन जाती है ।

थोड़ी देर सुरंजना रुकी । उसके बाद फिर उसने कहा,

“मैंने भी वैसे ही शुरू किया था। तुम्हारे जैसे। मैं महत्त्वकांक्षी नहीं थी किन्तु अभावग्रस्त थी। जैसे भी हो मैं उनकी चंगुल में फँस गयी थी। अब मिसेज बरुवा के तरफ से बड़े बड़े व्यापार को हथियाना के विनिमय स्वरूप मैं बड़े बड़े लोगों को अपने शरीर से संतुष्ट करती हूँ। धीरे धीरे मैं भूलने लगी हूँ कि कभी में भी सत और विनम्र, अच्छी लड़की हुआ करती थी। रूपाली के जैसे पढ़-लिखकर अच्छे इंसान के रूप में जीना चाहती थी। तुम मेरी जैसी मत बनना जेउति,- मनोरमा के चंगुल में फँसकर अपने आप को ध्वंस मत करो-” [49]

यह सब सुनने के बाद जेउति विस्मित रह गई थी...लेकिन तब तक बहुत देर भी हो चुकी थी। मनोरमा के व्यापार में जेउति अब छोटा ही सही पर काँटा बन चुकी थी। अपना रास्ता साफ करने के लिए उसने जेउति के साथ इतना घोर अन्याय किया। कथा के में अपर्णा द्वारा इस अन्याय का पर्दाफांस किया गया है।

मायाबृत:

नीरा अपने जीवन-यात्रा के साथ अनेक सहयात्री लेकर चली थी। उस यात्रा में उसे अनेक ऐसे राही मिले जो तकदीरों का मारा था। उन सब की जीवन कथाओं से परिपूर्ण है यह उपन्यास। प्रस्तुत उपन्यास में पंचायती राजनीति को दिखाया गया है और साथ ही यह भी दिखाया गया है कि उसका कितना गलत और जानलेवा प्रभाव समाज पर पड़ता है। ख़ासकर लड़कियों पर; जिन्हें मार दिया जाता हैं,

“हरियाणा,यू.पी. आदि स्थानों पर उच्च पर्याय के जाटों ने मिलकर ‘खाप पंचायत’ का निर्माण किया था ताकि उनकी मर्यादा और सत्ता सदा कायम रहें। एक ही अंचल के कई सारे गाँव के एक ही गोत्र के लोगों खाप पंचायत बनते है। बहुत पुरानी व्यवस्था है यह। पता है इसकी मूल नीति क्या है ? पंचायत के अंतर्गत आनेवाले सारे गाँवों के लड़के-लड़कियों भाई-बहन माना जाता है। उनके बीच विवाह संभव नहीं है। एक ही गोत्र में आनेवाले दूसरे गाँवों के लड़के-लड़कियों के साथ भी विवाह नहीं हो सकता है। प्रेम-विवाह पूर्ण रूप से मना है। खाप पंचायत के नियम नहीं

माननेवाले कितने लड़के-लड़कियों को नजाने मार डाला गया हैं । पंचायत का नियम नहीं मानने से जुर्माना भरना पड़ता है, सामाजिक रूप में उनका बहिष्कार किया जाता है, आत्महत्या करने पर मजबूर कर दिया जाता है । वहाँ ओनार किलिंग भी चलता है । सिर्फ दस-पंद्रह जन मुखिया मिलकर तमाम लड़के-लड़कियों का भाग्य निर्णय करता है । सभी चीजों का फ़ैसला पंचायत में ही किया जाता है । कोर्ट, पुलिस के चक्कर में पड़कर जुलुम ढाने से पंचायत को ही श्रेष्ठ समझते है लोग, उनके हिसाब से यहाँ निरपेक्ष न्याय मिलता है क्योंकि सभी एक दूसरे को जानते हैं?"[50]

भारतवर्ष जैसे गणतांत्रिक देश में शासन की इतनी अद्भुत व्यवस्था!! आज भी हैरान कर देनेवाली ज़ालिम प्रथा का निर्वाह हो रहा है । सरकार के बनाए नियमों और क़ानूनों का उलंघन कर आए दिन मासूमों की हत्या हो रही हैं । उनसे उनका जीने का मौलिक अधिकार छीन लिया जा रहा हैं और बाकी की जनता मौन हैं...कैसी विसंगति है यहाँ? अपनी सत्ता और प्रभुत्व के खातिर पंचायतवाले अपनी मनमानी करते ही जा रहे हैं । इन नियमों को मिटाना चाहिए और लोगों को इसके विरुद्ध आवाज उठाना चाहिए । विशेषकर पीढ़ितों को हिम्मत से काम लेकर इस अन्याय के विरुद्ध लड़ना चाहिए ।

कथाकार तब सफल होता है जब कथा में समस्या के उत्थापन क के साथ-साथ समाधान का राह भी सुझाये जाते है । रीता चौधुरी ने खाप पंचायत के अन्याय की शिकार बनी नंदिनी को एक नया परिचय दिलाना । भले ही इस प्रयास में झूठ का सहारा लिया है किन्तु वह झूठ एक जिंदेगी से बड़ा नहीं है ।

एई समय सेई समय:

पूर्व ही यह उल्लेख किया है कि यह उपन्यास राजनैतिक क्षेत्र पर आधृत है । इसमें असम प्रदेश की पुरानी और तत्कालीन राजनीति पर परोक्ष रूप से प्रकाश डाला गया है । असम के गणतांत्रिक आंदोलन की भूतपूर्व सक्रिय सदस्य अदिति यहाँ मुख्य किरदार के रूप में सामने

आई है । अपने अनुभवों के चलते उसने अपने दोनों बेटियों को बड़ा किया था । अदिति का ज़्यादातर ध्यान इस बात पर था कि उसके दोनों बेटियाँ अच्छाइयों के साथ बुराइयों को भी जान सके; ताकि सटीक समय पर उनसे लड़ सके । अपने राजनीतिक अनुभवों से वह अपने बच्चियों को सीख तो देती थी, किन्तु उनसे उन्हें दूर भी रखती थी । कॉलेज की प्रवक्ता होने से पहले वह राजनीति के क्षमताशाली नेता की पत्नी थी । उसका पति किसी समय उसके आंदोलन का मित्र भी था किन्तु जब उसने देखा कि अब वे समझोते वाली राजनीति पर उस्ताद बन चुके थे । पति के आदर्शगत स्खलन को देखकर उसे बड़ा दुख हुआ । तब तक दोनों साथ थे, परंतु उसके जीवन में एक महत्वपूर्ण बदलाव आया । उन दोनों के एक साथी ने अपने बच्ची को पालने की ज़िम्मेदारी अदिति को दे दी । अदिति के पति ने आंदोलनकारी के बेटी को अपने घर में जगह नहीं दी । नन्ही सी बच्ची को लेकर वह अपने जीवन के नए संघर्ष की ओर निकल पड़ी । राजनीति के भँवर ने एक परिवार को तोड़ दिया, एक बच्ची का साधारण जीवन नष्ट कर दिया । उपन्यास में सुकन्या नाम का एक किरदार है; जिसके माता-पिता अत्यंत रईस आदमी हैं । बड़े ठेकेदार है; किन्तु सब राजनीति के बड़े बड़े नेता के चमसे हैं । उनके पास धन तो था पर अपने बेटी को देने के लिए समय नहीं था; किन्तु वे भी कभी असम प्रांत के स्वतंत्रता के आंदोलन में हिस्सा लेने वाले व्यक्ति थे । राजनीति के मूल आदर्शों को किस तरह लोग भूल जाते है, उस बात को प्रस्तुत उपन्यास में दिखाया गया है । सुकन्या को कभी भी किसी चीज का अभाव न हुआ सिवाए प्यार के...उसकी कमजोरी को उसने अपनी ताकत बना ली और दूसरों का मदद करके वह उस खुशी को महसूस करती थी । अपने बुद्धि और साहसी मनोभाव के कारण ही कॉलेज मैं होने वाले बहुत सारें गलत कामों को रोकने में वह सफल होती हैं । परंतु इससे उसके दुश्मन भी बढ़ जाते है । कॉलेज चुनाव को जीतने के कॉलेज के ही कुछ बुरे लड़कों ने राजनीति जगत के गलत लोगों का सहारा लेकर उसे बुरी तरह फंचा दिया । सुकन्या को बदनाम करने के लिए वे कुछ भी करने के राजी थे,

“पर करेंगे कैसे ? आज जो हुआ-उससे तो वह हीरो बन गई है । वह जिसके साथ रहेगी...वही पार्टी इसबार जीतेगी ।

अगर उसीको गंदा कर दे तो ?” [51]

राजनीति में कई बार मासूम लड़कियों को फँसाकर उन्हें बदनाम कर दिया जाता है, यहाँ भी वही चाल चली । सुकन्या बड़े घर की बेटी थी और उसमें बुद्धि और साहस दोनों था; इसीलिए वह इन सब से निकल पायी । किन्तु सब ऐसा नहीं कर सकती है, जो गरीब होते है, वे कुछ नहीं कर पाते है...एक ही झटके में उनकी जिंदेगी तबाह हो जाती हैं । ऐसे कई मुद्दों पर इस उपन्यास पर प्रकाश डाला गया हैं । केवल यही नहीं राजनीति के क्षमता लोगों को अंधा कर देते हैं, वह इंसान से जानवर बन जाता है । कॉलेज के प्रवक्ता तक को नहीं छोड़ते हैं, लोगों को मारडालने तक वें नहीं हिसकते है...। प्रस्तुत उपन्यास में कथाकार ने इन सभी बातों पर ख़ासकर ध्यान दिया है और समाज में फैले अन्याय और बुराइयों के खिलाफ़ लड़ने के लिए सभी को प्रोत्साहित किया हैं । विशेषरूप से लड़कियों को उत्साहित करना उनका उद्देश्य रहा है, सुकन्या के चरित्र के माध्यम से यह संदेश पाठकों तक पहुँचाना का प्रयास किया गया है ।

4.3 आर्थिक पक्ष:

आर्थिक स्वतंत्रता एक बहुत बड़ा शब्द है । जिसके पास यह स्वतंत्रता नहीं होती है, केवल वे ही इसका मोल समझ सकते हैं । कहने को तो पैसे से दुनिया नहीं खरीदी जा सकती है; पर यहाँ रहने के लिए उसीका सहारा लेना पड़ता हैं । प्रत्येक काम के लिए जब व्यक्ति को किसी दूसरे पर निर्भरशील होना पड़ता है, तब उन्हें कितना मानसिक आघात सहना पड़ता है, वह केवल वह व्यक्ति ही महसूस कर सकता है । साधारणतः एक स्त्री को इस मानसिक दर्द से गुजरना पड़ता है । विश्वभर में नारी मुक्ति आंदोलन को सबसे पहले इसी मुद्दे के नज़र से देखा गया था । आर्थिक स्वतन्त्रता किसी भी व्यक्ति के लिए अपरिहार्य होता है । विशेष रूप से नारी के अस्तित्व के साथ यह प्रश्न हमेशा जुड़ा रहता है । पति छोड़ देगा तो वह कहाँ जायेगी ?

तथाकथित परंपरागत भारतीय समाज में शादी के बाद बेटी की ज़िम्मेदारी से माँ-बाप अपना पल्ला झाड़ लेते है । तो अब वह कैसे जियेगी ? अपनी पहचान कैसे बनायेगी ? तभी आर्थिक स्वतंत्रता का सवाल आकर खड़ा होता है...अर्थात सही मायनों में अपने पैरों पर खड़े होने के लिए नारी का अर्थनैतिक रूप से स्वतंत्र होना अत्यंत आवश्यक है । शोध के दौरान यह परिलक्षित हुआ है कि दोनों भाषाओं के कथाकारों ने इस मुद्दे को काफी गंभीरता से लिया है और उसे सूक्ष्म एवं मार्मिक रूप से पाठकों के सामने रखने का प्रयंत किया हैं ।

4.3.1 मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों के आधार पर:

उत्तर भारत के स्त्रियॉ के आर्थिक दुरावस्था का मर्मस्पर्शी उदाहरण मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में परिलक्षित होता है । *इदन्नमम* उपन्यास की नायिका मंदा ने घर घर जाकर रामायण बाँचा था ताकि उसे और उसकी दादी को किसी की मेहरबानी में जीना न पड़े । आर्थिक समस्या से मनुष्य का आत्मविश्वास जुड़ा हुआ होता है । उन्हें अपने दम पर जीवन-व्यतीत करना था, किसी पर बोझ बनकर वे जीना नहीं चाहते थे, इसीलिए उन लोगों ने स्वयं आर्थिक रूप से स्वतंत्र होने के उपाय खोज निकाले थे । उसके पिता के मृत्यु के बाद किसी भरोसेमंद आदमी ने उसके खेत छीन लिया और मजबूरन दादी और अपना पेट पालने के लिए घर-घर जाकर उसे भजन गाना पड़ा । उसी तरह अगर *चाक* की नायिका सारंग की बात करें तो, वहाँ पाठकों का परिचय एक एसी स्त्री से होता है, जो पढ़ी लिखी होकर भी आर्थिक कठिनाइयों से जूझती है । उसके पति को यह रोब है कि उसने पढ़ाई की है; परंतु उसे आत्मनिर्भरशील बनाने के सोच से वह कोसो दूर है । खोट समाज की मानसिकता में है, जो लोगों को अपनी सोच बदलने से रोक रहा है । परंतु प्रत्येक व्यक्ति यदि स्त्री-पुरुष का भेद एक क्षण के भूल जाये तो इस समस्या का हल निकालना अत्यंत सरल हो जाता । लेकिन वे तो स्त्री को अपने पेरों की धूल समझने की मूर्खता कर बैठते है । जिस माता की कोख से पैदा होता है, बाद में 'सभ्य' होकर उसे गालि देता है । अपनी हर जरूरत की चीज के लिए किसी के आगे हाथ फैलाना किसी भी व्यक्ति को मंजूर

नहीं होता हैं । कथाकार ने भी इसी बात को स्पष्ट करने का प्रयास किया है । *अल्मा कबूतरी* उपन्यास की नायिका अल्मा ने भी आर्थिक स्वतंत्रता के लिए लड़ाई की थी । उसने श्री राम शास्त्री के साथ शारीरिक संबंध बनाने से इंकार नहीं किया था । क्योंकि वह जानती थी कि दिन इसी रास्ते पर चलकर अपने बलबूते पर वह अपने प्रेमी राणा को खोज पाएगी । उसने अपने त्याग और संघर्ष से एक दिन ऐसा मुकाम हासिल कर लिया था जब उसे किसी दूसरे के सामने हाथ फैलाना न पड़े । उसी प्रकार अगर *विजन* उपन्यास की तरफ देखा जाये तो डॉ आभा और डॉ नेहा ने भी इसी अर्थनैतिक स्वतंत्रता को महसूस करने हेतु अपने आप को इस काबिल बनाया था, जिससे उसे किसी दूसरे के आगे हाथ फैलाना न पड़े । परंतु अफ़सोस की बात है कि डॉ नेहा को काबिल होते हुए भी दूसरे के आगे झुकना पड़ा, इस बात का असर उसके दिल व दिमाग पर इसकदर पड़ा कि वह अपना मानसिक संतुलन ही खो बैठती है ।

4.3.2 रीता चौधुरी के उपन्यासों के आधार पर:

असमीया उपन्यास में रीता चौधुरी का नाम बड़े ही गौरव के साथ लिया जाता है और साथ ही उनके प्रयासों को भी सराहा जाता है कि किस तरह उन्होने बुलंद आवाज़ में नारी पर हो रहे अन्यायों पर अपनी लेखनी चलाई । कथाकार ने अपने उपन्यासों में नारी की आर्थिक समस्या पर भी प्रकाश डाला है । तत्कालीन समाज में नारी को किन मुसकिलों का सामना करना पड़ा था, किन परिस्थितियों से उन्हें गुजरना पड़ा था, उसका चित्रण भी कथाकार ने भली-भाँति किया है । *एइ समय सेइ समय* उपन्यास के में ‘अदिति’ अपनी आर्थिक स्वतंत्रता व पहचान के लिए संग्राम करती हैं । अपने पति के साथ आदर्शगत मतभेद के कारण उसे अलग से रहना पड़ा और तभी उसने अपने आप आर्थिक रूप से स्वतंत्र बनाया । अपने बेटियों को अत्यंत कष्ट से बड़ा किया, पर कभी भी किसी ने आगे हाथ नहीं जोड़े । *पपीया तरार साधु* की नायिका ‘जेउति’ ने भी आर्थिक स्वतंत्रता के लिए संघर्ष किया था । एक नौकरी की तलाश में वह दर-दर भटकती रही । सबने इसी बात का फ़ायदा उठाया और उसके साथ शारीरिक संबंध बनाए । कथा

के अंत तक वह आर्थिक रूप से स्वतंत्र नहीं हो पाती है । इधर उपन्यास की दूसरी नायिका अपने आप को आर्थिक रूप से स्वतंत्र बना लेती हो और इसीलिए उसे किसी भी बेईमान के सामने झुकना नहीं पड़ा । *देउलांखुई* की नायिका 'चंद्रप्रभा' रानी होते हुए भी उसका अपना कुछ भी न था, जो कुछ था वह राजा का था । परंतु जब वह 'गोभा' राज्य में आयी तब उसने देखा की वहाँ की महिलाएँ अपने आवश्यक वस्तुओं के लिए किसी दूसरे के ऊपर निर्भर नहीं करती है । आर्थिक स्वतंत्रता व्यक्ति को उदार व संयमी बना देता है । *मायाबृत* उपन्यास की नायिका 'नीरा' यद्यपि बड़े बाप की बेटी थी, परंतु आर्थिक स्वतंत्रता उसे भी नसीब न हुआ । 'ब्रजेन' के साथ शादी होने बाद उसने इस कड़वे सच को और अधिक नजदीक से झेला । बात बात पर पति उसे ताना मारते, अपने पैसों का रोब दिखाते । कुछ भी करना चाहती तो यह कहते कि दूसरों के पैसों से मौज करना आसान है, ख़ुद कमाकर लाओ तो मानु । इस प्रकार के बातों ने नीरा को दूसरी औरतों की तरह कमजोर नहीं बनाया, बल्कि उसे स्वतंत्र होने के लिए प्रोत्साहित किया । इसी के चलते अपने आनेवाले दिनों में नीरा एक सफल कथाकार के रूप में अपने आप को प्रतिष्ठित करने में सफल हो जाती है ।

4.4. दोनों कथाकारों के उपन्यासों में निहित नारी संवेदना का तुलनात्मक विवेचन:

डॉ. मनोरमा शर्मा ने तुलनात्मक साहित्य की विशेषताओं को देखते हुए खूब कहा हैं; "तुलना के बिना अनुसंधान पूर्ण नहीं हो पाता । तुलनात्मक अनुसंधान द्वारा कृति या कृतिकार में सत्योन्वेषण करके निष्कर्षों का नवनीत निकाला जाता है । अतः तुलनात्मक अनुसंधान मनुष्य के विचारों, भावों और सामाजिक चेतना का दर्पण है । साहित्य के सम्यक अनुशीलन में तुलनात्मक दृष्टि महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है ।" [52] मैत्रेयी पुष्पा और रीता चौधुरी दोनों ही कथाकारों ने नारी को हर एक पहलू से परखने का प्रयास किया है । चाहे वह सामाजिक दृष्टि से हो या राजनीतिक या फिर आर्थिक...दोनों ने इस बात पर ध्यान दिया है कि शिक्षा नारी के लिए कितना महत्वपूर्ण है, क्योंकि बिना इसके न तो वे अपनी अधिकारों जान पाएँगी और न ही

अपने अस्तित्व के लिए लड़ पाएँगी । परिस्थिति और लोग भले ही अलग होते हो, पर दोनों कथाकरों की नायिकाओं में साहस और आत्मविश्वास एक जैसी ही रही हैं । हाँ, एक बात यहाँ उल्लेखनीय है कि रीता चौधुरी के उपन्यासों की तुलना में मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में परिस्थितियाँ नारी के लिए अधिक प्रतिकूल नज़र आती है । उनको अपने रास्तों में अधिक काँटे मिले हैं । मैत्रेयी पुष्पा कहती है, "...मेरी नायिकाओं के साथ यही तो हुआ कि उन्होंने अपनी नैतिकता खुद बनाई...।"[53] उनकी नायिकाओं के मन में अधिक आक्रोश भरा हुआ है, जो उसने हिंसात्मक कार्य करने पर मजबूर कर देती हैं । परंतु इससे कथाकार का तात्पर्य कतई यह नहीं रहा है कि बदला लेने के लिए किसी की जान ले ली जाये । उन्होंने बस यह महसूस करवाने का प्रयत्न किया है कि एक नारी पर क्या बीतती है... जब उसका कोई अपना उसे धोखा देता है...जब कोई उससे छल करता है !! सुगना को जब उसके सगे बाप ने पैसों के लालस में आकर अभिलाख जैसे गलत आदमी से से रिस्ता जोड़ने पर मजबूर किया था; तब सुगना पर क्या बीती होगी ! साथ ही जब अभिलाख द्वारा उसपर शारीरिक शोषण हो रहे थे और जब उसका बाप चुपचाप यह सब देखकर भी अनदेखा कर रहा था; तब भला वह किस दर्द से गुजरी होगी ! इन सभी हादसों को हम अनुभव नहीं कर सकते हैं और न ही उसका अनुमान लगा सकते हैं; क्योंकि हमने उसे नहीं भोगा हैं । अपने इन शारीरिक-मानसिक शोषण के उपरांत आक्रोशवश सुगना द्वारा अभिलाख की हत्या हो जाना स्वाभाविक ही प्रतीत होता है । लेकिन कथाकार ने इस हिंसा को सही रास्ता नहीं माना है और सुगना का आत्महत्या करना शायद इसी बात का द्योतक है । इधर रीता चौधुरी द्वारा रचित उपन्यास *पपीया तरार साधु* की नायिका जेउति पर भी अनगिनत शारीरिक व मानसिक शोषण होते हैं । लेकिन वह किसी प्रकार आक्रोशमूलक प्रतिशोध नहीं लेती हैं । लेकिन वह हार भी नहीं मानती है, अपनी डायरी में उस हर एक इंसान का पर्दाफास करके इस दुनिया से चली जाती हैं; जिन सबने मिलकर उसके भोलेपन का फ़ायदा उठाया था । जिन लोगों ने अपने होने के दावे से जेउति को झूठी हमदर्दी दिलायी थी और उसका इस्तेमाल किया था । दोनों भाषाओं के उपन्यासों में हालात अलग अलग थे, परंतु दोनों ही

कथाकारों की नायिकाओं में न्याय की खोज समान थी । रास्ते अलग थीं; पर मंज़िलें हमेशा एक ही रही हैं । सच्चाई का साथ देकर अपनी पहचान बनाना ही उनका एक मात्र लक्ष्य था । उन सभी नायिकाओं ने हर हाल में इसका पालन किया ।

अतः उपरोक्त विश्लेषण के उपरांत यह कहा जा सकता है कि मैत्रेयी पुष्पा और रीता चौधुरी ने अपने अपने उपन्यासों में नारी संवेदना के हर पहलुओं पर विचार किया हैं । समाज, राजनीति, अर्थनीति इन सभी क्षेत्रों में स्त्री को कितनी कठिन परिस्थितियों से गुजरना पड़ता हैं, उसका सजीव वर्णन उनके उपन्यासों में प्राप्त हैं । *विजन* की नायिका डॉ आभा ने एक औरत को न्याय दिलाने का प्रयास किया था, परंतु वह औरत स्वयं ही मुक्त नहीं होना चाहती थी; वह अपने पति के अहसानों तले दबी थी । जिसके लिए पति ही सबकुछ था । नारी का अपने आप को हीन समझना ही सबसे बड़ी भूल है । दोनों कथाकारों ने नारी को इस मानसिकता से ऊपर उठने के लिए उत्साह प्रदान किया हैं । नारी की अन्तर्मन की दशा का यहाँ अत्यंत सूक्ष्म चित्रण हुआ है । आखिर एक नारी ही नारी के हृदय की व्यथा को समझ सकती हैं; दोनों भिन्न भाषी कथाकारों के उपन्यासों में इसी बात को प्रमाणित किया गया हैं । यदि कोई पुरुष कथाकार इसकी रचना करते तो शायद इतनी गहराई से विश्लेषण न कर पाते…!! शायद इसीलिए स्त्री-विमर्श में महिला कथाकारों को प्राथमिकता दी जाती हैं । आखिर जो भोगता है, वही उस दर्द को अनुभूत कर सकता है । मैत्रेयी पुष्पा और रीता चौधुरी ने इस दर्द को भोगा है, इसीलिए वे इसकदर मार्मिक चित्रण प्रस्तुत करने में सफल सिद्ध हुए हैं । परंतु यह प्रयास विफल हो जाएगा यदि नारी अपनी शक्ति को स्वयं नहीं समझ पाएगी । रमणिका गुप्ता के शब्दों में, “अन्य देशों की बजाय भारत में औरतों को मुक्ति आंदोलन की तरफ प्रेरित करने में बहुत कठिनाई सामने आती है क्योंकि वे स्वयं अपने आप को हीन मानती हैं और आत्मसम्मान का कोई अहसास भी वे नहीं पालतीं ।”[54] कितने दुख के साथ लेखक ने यह बात कही होगी; हर सहृदय पाठक इसका सहज अनुमान लगा सकते हैं । नारी के ऊपर लगे हुए इस सारें इल्जामों को हटाने की जिम्मेदारी भी अब नारी की ही हैं ।

संदर्भ सूची:

1. श्री धर, डॉ प्रदीप, *स्त्री चिंतन की अंतर्धारायें और समकालीन हिन्दी उपन्यास,* पृष्ट. सं.45
2. पुष्पा, मैत्रेयी, *अल्मा कबूतरी,* राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तीसरी आवृति-2011, पृष्ट सं. 103
3. पुष्पा, मैत्रेयी, *अल्मा कबूतरी,* राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तीसरी आवृति-2011, पृष्ट सं. 359
4. पुष्पा, मैत्रेयी, *अल्मा कबूतरी,* राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तीसरी आवृति-2011, पृष्ट सं. 367
5. पुष्पा, मैत्रेयी, *अल्मा कबूतरी,* राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तीसरी आवृति-2011, पृष्ट सं. 372
6. पुष्पा, मैत्रेयी, *अल्मा कबूतरी,* राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तीसरी आवृति-2011, पृष्ट सं. 369
7. पुष्पा, मैत्रेयी, *अल्मा कबूतरी,* राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तीसरी आवृति-2011, पृष्ट सं. 389-390
8. पुष्पा, मैत्रेयी, *चाक,* राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2004, पृष्ट सं. 328
9. पुष्पा, मैत्रेयी, *चाक,* राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2004, पृष्ट सं. 172
10. पुष्पा, मैत्रेयी, *चाक,* राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2004, पृष्ट सं. 323
11. पुष्पा, मैत्रेयी, *चाक,* राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2004, पृष्ट सं. 410
12. पुष्पा, मैत्रेयी, *इदन्नमम,* राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तीसरी आवृत्ति, 2012, पृष्ट सं. 150
13. पुष्पा, मैत्रेयी, *इदन्नमम,* राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तीसरी आवृत्ति, 2012, पृष्ट सं.151-152

14. पुष्पा, मैत्रेयी, *इदन्नमम,* राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तीसरी आवृत्ति, 2012, पृष्ट सं.369

15. पुष्पा, मैत्रेयी, *इदन्नमम,* राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तीसरी आवृत्ति, 2012, पृष्ट सं 421

16. पुष्पा, मैत्रेयी, *विजन,* वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2002, पृष्ट सं. 163

17. पुष्पा, मैत्रेयी, *विजन,* वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2002, पृष्ट सं. 138

18. पुष्पा, मैत्रेयी, *विजन,* वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2002, पृष्ट सं. 154

19. पुष्पा, मैत्रेयी, *विजन,* वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2002, पृष्ट सं. 154

20. पुष्पा, मैत्रेयी, *विजन,* वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2002, पृष्ट सं. 90

21. पुष्पा, मैत्रेयी, *विजन,* वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2002, पृष्ट सं. 111

22. चौधुरी, रीता, *देउलांखुइ,* ज्योति प्रकाशन, गुवाहाटी, 2005, पृष्ट सं.117

23. चौधुरी, रीता, *एइ समय सेइ समय,* वनलता प्रकाशन, गुवाहाटी, 2007, पृष्ट सं. 256

24. चौधुरी, रीता, *पपीया तरार साधु,* केम्ब्रिज इंडिया, गुवाहाटी, 1998, पृष्ट सं. 22

25. चौधुरी, रीता, *मायाबृत्त,* ज्योति प्रकाशन, पानबाजार, गुवाहाटी, 2012, पृष्ट सं. 23

26. चौधुरी, रीता, *मायाबृत्त,* ज्योति प्रकाशन, पानबाजार, गुवाहाटी, 2012, पृष्ट सं. 299

27. चौधुरी, रीता, *मायाबृत्त,* ज्योति प्रकाशन, पानबाजार, गुवाहाटी, 2012, पृष्ट सं. 378

28. चौधुरी, रीता, *मायाबृत्त,* ज्योति प्रकाशन, पानबाजार, गुवाहाटी, 2012, पृष्ट सं. 378

29. चौधुरी, रीता, *मायाबृत्त,* ज्योति प्रकाशन, पानबाजार, गुवाहाटी, 2012, पृष्ट सं. 311

30. चौधुरी, रीता, *मायाबृत्त,* ज्योति प्रकाशन, पानबाजार, गुवाहाटी, 2012, पृष्ट सं. 471

31. चौधुरी, रीता, *मायाबृत्त,* ज्योति प्रकाशन, पानबाजार, गुवाहाटी, 2012, पृष्ट सं. 466

32. पुष्पा, मैत्रेयी, *अल्मा कबूतरी,* राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तीसरी आवृत्ति-2011, पृष्ट सं. 390

33. पुष्पा, मैत्रेयी, *अल्मा कबूतरी,* राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तीसरी आवृत्ति-2011, पृष्ट सं. 131
34. पुष्पा, मैत्रेयी, *चाक,* राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2004, पृष्ट सं. 404
35. पुष्पा, मैत्रेयी, *चाक,* राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2004, पृष्ट. सं. 413
36. पुष्पा, मैत्रेयी, *चाक,* राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2004, पृष्ट. सं. 417
37. पुष्पा, मैत्रेयी, *इदन्नमम,* राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तीसरी आवृत्ति, 2012, पृष्ट. सं. 352
38. पुष्पा, मैत्रेयी, *इदन्नमम,* राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तीसरी आवृत्ति, 2012, पृष्ट. सं. 352
39. पुष्पा, मैत्रेयी, *इदन्नमम,* राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तीसरी आवृत्ति, 2012, पृष्ट. सं. 353
40. पुष्पा, मैत्रेयी, *इदन्नमम,* राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तीसरी आवृत्ति, 2012, पृष्ट. सं. 350
41. पुष्पा, मैत्रेयी, *इदन्नमम,* राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तीसरी आवृत्ति, 2012, पृष्ट. सं. 412
42. पुष्पा, मैत्रेयी, *विजन,* वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2002, पृष्ट. सं. 154
43. चौधुरी, रीता, *देउलांखुइ,* ज्योति प्रकाशन, गुवाहाटी, 2005, पृष्ट. सं.81
44. चौधुरी, रीता, *देउलांखुइ,* ज्योति प्रकाशन, गुवाहाटी, 2005, पृष्ट. सं.175
45. चौधुरी, रीता, *देउलांखुइ,* ज्योति प्रकाशन, गुवाहाटी, 2005, पृष्ट. सं.162
46. चौधुरी, रीता, *देउलांखुइ,* ज्योति प्रकाशन, गुवाहाटी, 2005, पृष्ट. सं.196
47. चौधुरी, रीता, *पपीया तरार साधु,* केम्ब्रिज इंडिया, गुवाहाटी, 1998, पृष्ट. सं. 222

48. चौधुरी, रीता, *पपीया तरार साधु,* केम्ब्रिज इंडिया, गुवाहाटी, 1998, पृष्ट. सं. 289

49. चौधुरी, रीता, *मायाबृत,* ज्योति प्रकाशन, पानबाजार, गुवाहाटी, 2012, पृष्ट. सं. 419

50. चौधुरी, रीता, *एइसमय सेइ समय,* वनलता प्रकाशन, गुवाहाटी, 2007, पृष्ट सं.361

51. सं. राजुरकर, डॉ भ. ह.; बोरा, डॉ राजमल, *तुलनात्मक अध्ययन स्वरूप और समस्याएँ,* वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण-2004 पृष्ट सं. 40

52. पुष्पा, मैत्रेयी, *मेरे साक्षात्कार,* किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, 2010, पृष्ट. सं. 139

53. गुप्ता, रमणिका, *स्त्री विमर्श* (*कलम और कुदाल के बहाने*), शिल्पायन प्रकाशक, दिल्ली, 2010 पृष्ट. सं. 24